१/१३ १-१-७०

(१३)

मैं समस्त से एक हूं ।

सौंदर्य में भी ।

और कुरूपता में भी ।

क्योंकि, जो भी है, वह मेरे बिना नहीं है ।

पुण्यों में ही नहीं,

पापों में भी मेरी भागीदारी है ।

और केवल स्वर्ग ही नहीं,

नर्क भी मेरे ही हैं ।

बुद्ध, जीसस और लाओत्से .. ....

आह ! उनका वसीयतदार होना कितना आसान है ।

लेकिन,

चंगीज, तैमूर और हिटलर ?

वे भी तो मेरे ही भीतर हैं !

नहीं, नहीं .. आधी नहीं,

पूरी मनुष्यता ही मैं हूं ।

मनुष्यों का सब कुछ मेरा है ।

फूल भी, कांटे भी ।

आलोक भी, अंधकार भी ।

अमृत मेरा है,

तो फिर विष कौन पियेगा ?

'अमृत के साथ विष भी मेरा है',

ऐसा जो अनुभव करता है,

उसे ही मैं धार्मिक कहता हूं ।

क्योंकि,

ऐसे अनुभव की पीड़ा ही,

पृथ्वी के जीवन में क्रांति ला सकती है ।

युक्रांद

नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनायें

आचार्य श्री रजनीश जी की सृजनात्मक क्रांतिकारी

जीवन दृष्टि आपके जीवन को मंगल

आलोक से आपूरित कर दे

इस दिशा में हम आपका प्रेम और सहयोग चाहते हैं :

● युक्रांद की :
सदस्यता ग्रहण करके

संरक्षण सदस्य	:	५०० रु०
आजीवन	:	२०० रु०
दस वार्षिक ,,	:	१०० रु०
पांच वार्षिक ,,	:	५० रु०
वार्षिक ,,	:	१२ रु०

● युक्रांद में :
विज्ञापन प्रदान करके

कवर द्वितीय पृष्ठ	:	२०० रु०	प्रति अंक
कवर तृतीय पृष्ठ	:	१०० रु०	
कवर अंतिम पृष्ठ	:	१५० रु०	
भीतर का पूरा पृष्ठ	:	७५ रु०	

(इसके अतिरिक्त देश के प्रत्येक स्थान में विक्रय एवं विज्ञापन एजेन्ट नियुक्त करना है।)

निवेदक : अरविन्द कुमार, युक्रांद, कमला नेहरू नगर, जबलपुर।

मंगल उद्‌बोध

[आचार्य श्री रजनीश जी के ३९ वें जन्म दिवस पर देश के प्रेमीजनों से, प्रबुद्ध विचारकों से शुभकामनायें एवं मंगल उद्‌बोध प्राप्त हुए हैं – उनमें से कुछ भाव–सुमन हम यहां दे रहे हैं।]

ON 11th DECEMBER

That such a One, walks the earth,
That such a One, my eyes have seen,
That such a One, my ears have heard,
Whose Lotus-Feet, my hands have touched,
Who in all His Graciousness, has looked on me,
Ah, blessed me ....it is hard to believe !!
Unto Him, the only BELOVED,
I send this blessed day and every day,
My loving adorations.

Dolly Diddee
21/3 Bund Road,
Poona

आचार्यवर,
स्नेह-शुभेच्छायें स्वीकारें
जन्म दिन की मंगल वेला में ये पंक्तियां लिख रहा हूं।
थोथी परंपराओं के अनुगमन का
अवरुद्ध धर्म मान्यताओं की अंधवंदना का
संकीर्ण विचारों की जड़ता और मूढ़ता का
विद्रोह यज्ञ आपने प्रारंभ किया है।
आपकी युग-क्रान्ति सफल हो
आपका स्वर जन मानस सुने
यही कामना है
मेरी शुभ कामनायें ३९ वें जन्म दिन पर स्वीकारें

आपका
रामेश्वर गुरू
दीक्षितपुरा, जबलपुर

मेरी परेशानी

—शिव

मैं
चारों तरफ फैली हुई जमीन
देखता हूं
जिसका कहीं ओर-छोर नहीं सूझता
मगर कहां है चार फीट जगह
जहाँ रह सकूं स्वतन्त्र ?
जहाँ मुझे हिन्दू, मुसलमान, जैन या ईसाई
की कोठरियों में होना न पड़े बन्द,
जहाँ मैं रह सकूं मनुष्य .....
कहाँ है जमीन का एक भी टुकड़ा मेरे लिए ?
कहाँ है कोई शिक्षण-केन्द्र
अथवा कोई भी संस्था
जहाँ पूछी न जाये कौम ?
कहाँ है ऐसा मनुष्य
जो हमें केवल मनुष्य होने के कारण
प्रेम दे ?
आह मेरे रजनीश !
तुम्हीं एक मिले हो
जो मुझे केवल मनुष्य समझकर
गले लगाते हो,
मगर मैं तुम्हारी छाती पर तो नहीं रह सकता न !
रहने के लिए चाहिए जमीन .....
और वह कहाँ है ?
कहां जाऊं ?
कहाँ रहूं ?
कैसे जिऊं ?
किसे कहूं ?
—पृथ्वी कब मनुष्यों के लिए होगी ?

श्री रजनीश जी के जन्म-दिवस (११ दिस०) पर

—शिव

प्यारे प्रभो !
आज तेरे जन्म दिवस पर
मैंने भी चाहा था कि
कुछ लाऊं
और तेरी सेवा में भेंट करूँ
मगर
बहुत ढूंढ़ा ..... बहुत ढूंढ़ा.....
मुझे कुछ मिलता ही नहीं
जो मेरा हो ....
आह !
धरती पर सुगन्ध बनकर बरसने वाले !
क्या मेरे खाली हाथ स्वीकार कर लोगे ?
और मुझे तो एक और भी हैरानी होती है नाथ !
कि क्या सचमुच ही
तेरा कोई जन्म-दिन है ?

सत्य : दिशा अन्वेषण

[आचार्य श्री से श्री हरिकिशन दास अग्रवाल द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर]

प्रश्न : आप साधु-सन्यासियों के विरोधी क्यों हैं ?

मैं और साधुओं का विरोधी ?
आपके प्रश्न ने तो मुझे बड़े आश्चर्य में डाल दिया है ।
साधुता के नाम पर जो असाधुता चलती है, मैं उसका विरोधी हूं ।
और साधुता प्रकट हो सके इसलिये ही यह विरोध है ।
ध्यान रहे कि असाधुता से साधुता को हानि नहीं है ।
हानि है सदा मिथ्या साधुता से ।
असली सिक्कों को कंकड पत्थर हानि नहीं पहुंचाते हैं ।
हानि पहुंचाते हैं सिर्फ नकली सिक्के ।
वे असली सिक्कों को चलन के ही बाहर कर देते हैं ।
झूठे साधुओं के कारण साधुता के प्रकट होने की संभावनायें ही क्षीण हो गई हैं ।
झूठे साधुओं के कारण साधुता ही अपमानित हो गई है ।
और झूठी साधुता का पहला लक्षण है : आरोपित साधुता (Cultivated Renunciation)
साधुता आती है, लाई नहीं जाती ।
मैं साधु हो सकता हूं, बन नहीं सकता ।
अभ्यास से, आरोपण से, साधुता मात्र दीखती है, होती नहीं ।
साधुता है सरलता..... सहजता ।
और अभ्यास है सदा जटिल ।
अभ्यास है द्वन्द और दमन ।
इसलिये अभ्यास से कोई कभी सरल नहीं हो सकता है ।
वैसा होना असंभव है ।
बंध्या पुत्र जैसी ही यह असंभावना है ।
सरलता आती है समझ (Understanding) से
स्वयं को उसकी समग्रता में समझना ही सरलता का द्वार है।
जो स्वयं को समझ लेता है, वह पाता है कि साधु हो गया है ।
लेकिन वह साधु बनता नहीं है ।
क्योंकि 'बनता' तो सिर्फ वही है, जो जानता है कि 'नहीं' है ।
असाधु ही साधु बनते हैं ।
जो हो जाते हैं, वो तो बस हो जाते हैं ।

उनकी साधुता स्वयं के समक्ष एक आविष्कार (Discovery) होती है।
और तथाकथित असाधु साधुओं की साधुता दूसरों के समक्ष मात्र एक घोषणा है।
सत्य साधुता इतनी सहज और सरल है कि उसकी घोषणा का सवाल ही नहीं है।
वह तो आती ही स्वयं के विसर्जन से है।
अहंकार जहां है, वहां वह नहीं है।
लेकिन मिथ्या साधुता अहंकार का ही सूक्ष्मतम सृजन है।
इसीलिये तो वह वस्त्रों में ही होती है।
इसीलिये तो वह संप्रदायों में होती है ·· क्रिया कांडों में होती है ···पद पदवियों में होती है।
आह ! कैसा आश्चर्य है कि साधु भी जैन होते हैं, हिन्दू होते हैं, मुसलमान होते हैं।
कम से कम साधु तो बस मनुष्य होना चाहिये न ?
साधु भी महामंडलेश्वर होते हैं, जगतगुरू होते हैं, पोप होते हैं,
कम से कम साधु तो पद पदवियों के बचकाने पन से मुक्त होने चाहिये न ?
लेकिन ऐसा नहीं है, क्योंकि साधु ही साधु नहीं है।

●●●

* मैं सागर के किनारे खड़ा था। मन में प्रश्न उठा कि सारी नदियां सागर में ही क्यों गिरती हैं ? निश्चय ही सागर उन सबसे नीचा है, इसलिये ही। और यह विचार एक आलोक की भाँति मेरी अंतरात्मा पर फैल गया। धन्य हैं जो विनम्र हैं, क्योंकि परमात्मा अपनी संपदा से उन्हें परिपूरित कर देता है।

* परमात्मा को पाने के लिए शुभ और अशुभ दोनों का अतिक्रमण करना होता है। क्योंकि तभी चेतना भेद से उठती और अभेद में प्रतिष्ठित होती है।

* मित्र, अशुभ को छोड़ा है, शुभ को भी छोड़ दो, क्योंकि जहां तक किसी पर भी पकड़ है, वहां तक अहंकार है।

* आंखें खोलो और देखो। क्या जो भी दिखाई पड़ता है, वह सब परिवर्तन नहीं है ? आंखें जो भी देख सकती हैं, क्या वह सब बहाव ही नहीं है और इस बहती नदी पर जो अपना भवन बनाता है क्या वह होश में है ?

* शरीर तो मंदिर है, उससे लड़ो नहीं, उसमें खोजो, उससे होकर ही तो परमात्मा तक पहुंचा जाता है, परमात्मा का जिसमें वास है। क्या वह इस कारण ही पवित्र नहीं ? शरीर तो एक तीर्थ है। उसकी शक्तियों को जो आत्मोन्मुखी करने में समर्थ होता है, वह उसके प्रति अत्यन्त कृतज्ञता से भर जाता हो तो कोई आश्चर्य नहीं है।

सचोट चिन्तन पर चिंता

(आचार्य श्री की वैज्ञानिक जीवन दृष्टि)

बंबई जीवन जागृति केन्द्र के सौजन्य से —

* आचार्य जी आपके विचारों से लोगों को बहुत चोटें पहुंचती हैं। हो सकता है इससे वे आपसे दूर हट जायें ?

—जो ठीक है और सच है वह मुझे कहना ही पड़ेगा। इसकी मुझे जरा भी परवाह नहीं है कि लोग दूर हट जायेंगे। आखिर जो सत्य है, लोगों को उसके साथ आना पड़ेगा चाहे आज वे दूर जाते हुए मालूम पड़ें। और लोग पास हैं इसलिए मैं असत्य नहीं बोल सकता। सच जब भी बोला जायेगा तब उसका प्राथमिक परिणाम यही होगा कि लोग दूर भागेंगे क्योंकि हजारों वर्षों की जिस धारणा में वे पले हैं उस पर चोट पड़ेगी। सत्य का हमेशा ही यही परिणाम हुआ है। वह हमारी जो धारणा है उसको तो तोड़ ही डालेगा और अगर हम धारणा तोड़ने से बचना चाहें तो फिर सत्य नहीं बोल सकते हैं।

जानकर मैं किसी को चोट नहीं पहुंचाना चाह रहा हूं। सचेष्ट मैं किसी को चोट नहीं पहुंचाना चाहता लेकिन सत्य जितनी चोट पहुंचाता है उसमें मैं असमर्थ हूं। उतनी चोट पहुंचेगी ही, उसको बचा भी नहीं सकता हूं। फिर मैं कोई राजनैतिक नेता नहीं हूं कि इसकी फिक्र करूं कि लोग मेरे पास आयें, कि मैं इसकी फिक्र करूं कि जनमत क्या है। मैं तो इस चिंता में हूं कि लोक मानस सत्य के निकट पहुंचना चाहिए। मैं लोक मानस के अनुकूल बनूं इसकी मुझे जरा भी चिंता नहीं। सत्य के अनुकूल लोक मानस बनाया जाये इसकी ही मुझे चिंता है।

निश्चित ही बहुत सी बातें कह रहा हूं जो चोट पहुंचाने वाली हैं, आघात करने वाली और विध्वंसकारी हैं। लेकिन असल में देखा जाये तो मैं अभी वे पूरी बातें नहीं कह रहा हूं जोकि और भी चोट करने वाली होंगी, जो कि और भी विध्वंसकारी होंगी। जैसे-जैसे लोगों की सुनने की भूमिका विकसित होती चली जायेगी, मैं उन सारी चीजों को कहना चाहूंगा। यह तो प्रारम्भ है एक यात्रा का। अभी इसमें और बहुत कुछ कहने जैसा है। जीवन के सारे मसलों पर हमारी दृष्टि थोथी और झूठी है। मैं तो जीवन के प्रत्येक मसले पर जहां-जहां झूठ है कहना चाहूंगा। और न केवल कहना चाहूंगा, बल्कि अगर सम्भावना बन सकी और शक्ति इकट्ठी हो सकी तो उस चीज को बदलने की भी पूरी चेष्टा करूंगा। जैसे कि सेक्स के बाबत अभी मैंने कहा। वह इसीलिये कह सका कि पिछले दो तीन वर्षों तक मैंने शुभ भूमिका बनाने की फिक्र की। कभी कभी थोड़ा मैं बोलता रहा था....कभी ब्रह्मचर्य के संबंध में कभी किसी और संदर्भ में। लेकिन पूरी तरह बात नहीं कही थी। फिर मुझे लगा कि अब भूमिका बनी है, अब कुछ कहा जा सकता है तो मैंने कहा। लेकिन अभी सेक्स पर बहुत कुछ कहने को है और जैसे ही भूमिका बनेगी वह मैं कहूंगा। ऐसे ही शिक्षा पर, ऐसे ही अर्थ व्यवस्था पर, ऐसे ही देश की राजनीति पर।

मुझे ऐसा लगता है कि हिन्दुस्तान में कोई तीन हजार वर्षों से जो विचारक हुए उनमें से कभी भी चोट करने के लिए कोई हिम्मत नहीं जुटा पाया। उन्होंने ज्यादा से ज्यादा यह फिक्र की, कि पुराने ढांचे में, पुराने

शब्दों का ही उपयोग करके, पुरानी मान्यताओं को ही स्वीकार करके, थोड़ा बहुत हेर फेर कर सकें तो करें। लेकिन सीधी चोट करने की हिम्मत नहीं जुटाई जा सकी और इसीलिये हिन्दुस्तान में विज्ञान पैदा नहीं हुआ। विज्ञान तो तभी पैदा होता है जब हम अनन्य रूप से सत्य के प्रति समर्पित हों। हम इसकी फिक्र छोड़ दें कि परिणाम क्या होगा। जो सत्य है, नग्न सत्य, उसको स्वीकृत करने की हिम्मत से ही विज्ञान शुरू होता है नहीं तो फिर आदमी फिक्सन में ही जीता है। और हमारा सारा मुल्क पुराण कथाओं में जी रहा है, विज्ञान में नहीं। उसके चिन्तन का ढंग वैज्ञानिक नहीं है। और हिन्दुस्तान की एक तकलीफ यह है कि हम सब व्यक्तियों से बंधे हुए हैं। कोई महावीर से बंधा है, कोई कृष्ण से, कोई गांधी से। और जो लोग भी व्यक्तियों से बंध जाते हैं उनकी सत्य के प्रति यात्राबंद हो जाती है, क्योंकि फिर वे सदा यही सोचते हैं कि उनके महापुरुष ने जो कहा है वही सत्य है, उससे अन्यथा सत्य हो ही नहीं सकता है।

अभी तो मैं सिद्धान्तों पर चोट कर रहा हूं जो कि उतना खतरनाक नहीं है। आने वाले दिनों में मैं व्यक्तियों पर भी चोट करूंगा जो कि ज्यादा खतरनाक मालूम होगा। क्योंकि अगर मैं अहिंसा के संबंध में कुछ बात करता हूं तो उतनी चोट नहीं पहुंचती है, लेकिन अगर मैं यह कहूं कि महावीर यह गलत कहते हैं तो चोट और ज्यादा पहुंचने वाली है। व्यक्तियों से हमारे मोह ज्यादा हैं। फिर भी अब थोड़ी थोड़ी चोट पहुंची हैं और इसके लिए तैयारी करनी पड़ेगी ताकि ज्यादा चोट पहुंचाई जा सके। बिना चोट पहुंचाये इस मुल्क में कोई चिन्तन पैदा ही नहीं किया जा सकता।

* स्वामी विवेकानंद, भगवान बुद्ध, महावीर और रामकृष्ण परमहंस में से आप किससे प्रभावित हैं ?

—किसी व्यक्ति से मैं प्रभावित नहीं हूं। लेकिन हां, कुछ कुछ मुझे सब में प्रीतिकर रहा है। कुछ चीज मार्क्स में भी उतनी ही प्रीतिकर है, जितनी बुद्ध में। कुछ मुझे नीत्से में भी प्रीतिकर है तो कुछ गांधी में। मेरे लिये कोई एक व्यक्ति विशेष प्रीतिकर नहीं है। सारे जगत की जो देन है उसमें जो भी मुझे श्रेष्ठतर लगता है, चाहे वह किसी से भी आता हो मुझे सदा अंगीकार है। इसीलिये मेरे साथ बड़ी कठिनाई हो गयी है। कभी मैं मार्क्स की प्रशंसा में बोलता हूं तो कभी मार्क्स के खिलाफ। कभी नीत्से की प्रशसा में बोलता हूं, कभी गांधी की, कभी बुद्ध की और कभी इनके खिलाफ भी बोलता हूं। कभी रामकृष्ण की प्रशंसा करता हूं तो कभी उनके खिलाफ भी बोलता हूं। लोगों को बहुत मुश्किल हो गई है। मुझे तो जिस व्यक्ति में जो ठीक लगता है जितना ठीक लगता है, उसकी प्रशंसा करता हूं और जो गलत लगता है उसकी निंदा। मैं किसी व्यक्ति–विशेष के पक्ष में नहीं हूं। मुझे जो ठीक दिखाई पड़ता है, वह जिस व्यक्ति में दिखाई पड़ता है, उतनी दूर तक मैं उसका प्रशंसक हूं।

* क्या इनमें से किसी के व्यक्तित्व से भी प्रभावित नहीं हैं ?

नहीं, जरा भी नहीं। मुझे तो पूरी मनुष्यता की फिक्र है। जो कुछ ड्रायव करना वह उस पूरी मनुष्यता से ही करना है। इसके लिये मन में जरा भी भाव नहीं आता कि महात्मा हैं या अल्पात्मा। सारी दुनिया में जो भी आज तक मनुष्यता ने सोचा है, उसकी जो भी क्रीम है वह सब मुझे अंगीकार है। जो श्रेष्टतर है वह सब स्वीकार है, चाहे वह एक ऐसे आदमी ने कहा हो जो शराब पीता है, जो वैश्यागामी है। वह अगर सत्य नहीं है तो मुझे अस्वीकार है फिर भले ही वह ऐसे आदमी ने कहा हो जो शराब नहीं पीता है, जो ब्रम्हचारी है और दिन रात भजन कीर्तन करता है। बेवकूफी की बात कोई भी कहे वह बेवकूफी की बात है। उसमें उसके व्यक्तित्व से कोई भी फर्क नहीं पड़ता। मुझे तो सारी मनुष्यता के आज तक के अनुभव में जो भी श्रेष्ठ है उस सबसे प्रेम है, किसी के व्यक्तित्व से इसमें कोई भी फर्क नहीं पड़ता।

●●●

आत्मा की गहराइयाँ

अहमदाबाद, एच. के. हाल में दिया गया एक प्रवचन

संकलनः—जयवन्ती, जूनागढ़

आत्मा की गहराइयों में—इन शब्दों पर सोचते ही मुझे ख्याल आता है कि आत्मा के अतिरिक्त तो और कोई गहराइयां होती ही नहीं हैं। पहाड़ों के पास खाइयों की गहराइयां हैं, लेकिन उनकी सीमा है। समुद्रों की गहराइयां हैं, लकिन उनकी भी सीमा है। जिस गहराई की सीमा हो, उसे गहराई कहना बिल्कुल ही ब्यर्थ है। गहराई तो सिर्फ एक है, जिसकी कोई सीमा नहीं है और वह गहराई आत्मा की है। स्वय की है, Being की है। आत्मा की गहराइयों से अर्थ ऐसा नहीं है कि कहीं सीमा आ जाती है, जहां गहराई समाप्त हो जाती है। आत्मा या Being का अर्थ है एक। जैसे अस्तित्व में प्रवेश। जिसमें प्रवेश तो होता है लेकिन जिसमें पहुंचना कभी नहीं होता। जिसमें हम प्रवेश तो करते हैं लेकिन ऐसा कभी नहीं होता कि हम कह दें—कि पहुंच गए वहाँ। जहाँ अंत आ गया। आत्मा अनन्त है। गहराई भी अनन्त है।

आत्मा की गहराइयों के सम्बन्ध में सोचते समय, दूसरी बात और भी स्मरण आती है और वह यह कि हमने गहराइयाँ देखी हैं। लेकिन देखने वाला हमेशा हर गहराई से अलग था। एक पहाड़ के किनारे खड़े होकर हम नीचे झांक सकते हैं गहराइयों में, लेकिन गहराई हमसे अलग है। आकाश में—वायुयान में उड़ते वक्त कोई नीचे झांक सकता है, लेकिन गहराई हमसे अलग है। आत्मा की गहराई ऐसी कोई चीज नहीं है जिसमें हम झांक सकें। आत्मा की गहराई हम स्वंय हैं। वहाँ यह नहीं है कि कोई झांकेगा और कोई गहराई होगी। वहाँ हम ही गहराई हैं। जो व्यक्ति भीतर जायेगा, वह पाएगा कि वह स्वंय एक गहराई है जिसका कोई अन्त नहीं।

हम तो छोटी सी गहराई से डरते हैं। पहाड़ के किनारे से झांकने में प्राण कंपते हैं। कहीं गिर न जायें, कहीं खो न जायें। छोटी सी गहराई हमें डराती है कि कहीं डुबा न ले। तो अनन्त गहराई से हमारे प्राण भयभीत होते हैं। जहाँ कि गिरना ही गिरना है। जहाँ, कहीं फिर पहुंचना नहीं है। तो शायद, इसीलिए हम बाहर,और बाहर घूमते हैं, भीतर नहीं जाते। जो जानते हैं वे निरंतर पुकारते हैं। लोगों को कहते हैं भीतर आओ (know Thyself), अपने को जानो, आत्मविद् बनो। हम उनकी सुन लेते हैं बातें और अपने रास्ते पर चल पड़ते हैं। जरुर कहीं न कहीं मनुष्य के प्राणों में कोई बात छिपी है कि वह भीतर जाने से भयभीत है। भीतर कोई जाना नहीं चाहता। भीतर जाने का कोई मौका भी मिल जाय तो हम उससे बचना चाहते हैं। अकेले भी हो जायें तो हमें डर लगता है। अकेने में डर लगता है, किसका? जब कोई भी नहीं है, हम अकेले ही हैं तो डर किसका है? निश्चित ही डर अपना लगता है। अकेले में डर अपना ही लगता है। पक्का भरोसा हो कि कोई भी नही है, बिल्कुल अकेला हूं, फिर भी हम डरते हैं। वह डर किसका है? आमतौर से हमने यही सोचा तोगाकि डर सदा दूसरे का है। दूसरे का डर बहुत साधारण है। दूसरे के डर से इन्तजाम किया जा सकता है। एक और गहरा डर है, वह अपना ही डर है, जो अकेले में लगता है। इसलिए हम साथ खोजते हैं।

अपने से भयभीत होके, हम साथ खोजते रहते हैं। कोई साथी चाहिए, कोई मित्र चाहिए, कोई संगी चाहिए, भीड़ चाहिए, समाज चाहिए, संगठन चाहिए, राष्ट्र चाहिए। अकेला होने को कोई भी राजी नहीं है। सब किसी के साथ और जो हमारे साथ खड़ा है, वह भी अकेले होने को राजी नहीं है। वह भी हमारे साथ खड़ा है। हम सब एक दूसरे का साथ खोज रहे हैं, ताकि अपने से बच सकें, ताकि अपने से बचाव हो सके। ताकि अपने से Escape हो जाय, ताकि अपने से हम भाग जायें। यह शायद आपको कभी ख्याल में नहीं आया होगा कि हम अपने से बचने की निरंतर कोशिश कर रहे हैं। काम में, व्यस्तता में खो रहे हैं अपने को। डुबा रहे हैं अपने को। जिसके पास काम नहीं, व्यस्तता नहीं—खेल में, मनोरंजन में डुबा रहा है अपने को। जो सब तरफ से ऊब गया है और डूबना मुश्किल है वह शराब पी रहा है, डुबा रहा है अपने को। जीवन भर हम अपने से बचने की कोशिश कर रहे हैं। भीतर झांकने में कोई निरंतर भय मालूम पड़ता है। भीतर मालूम होता है कि कोई अनन्त खड्ड है। जहाँ हम गए तो पता नहीं हम लौट सकें, न लौट सकें।

एक घटना मुझे स्मरण आती है। एक आदमी एक अंधेरी रात में, एक पहाड़ी रास्ते पर भटक गया है। रास्ता खो गया है। डरा हुआ भयभीत, पैर फिसल गया है, गिर पड़ा है। एक झाड़ी को पकड़ कर लटक गया है, डर रहा है। नीचे अनन्त खड्डा मालूम होता है। अंधकार है, पहाड़ी है अनजान रास्ता है। पकड़े है जोर से झाड़ी को, चिल्ला रहा है—बचाओ .....। लेकिन अपनी आवाज के सिवाय और कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता। हमने भी कभी अपनी आवाज के सिवाय कुछ और सुना है? चिल्ला रहें हैं—बचाओ। अपनी ही आवाज खाली खोह, कंदराओं से लौट के आ जाती है। सुनाई पड़ जाती है बचाओ। पास-पड़ोस में और चिल्लाते हुए लोग हैं हमारे। जो चिल्लाते हैं—बचाओ, तो हमें लगता है कि कोई आस-पास है। लेकिन जहां सभी चिल्ला रहे हों बचाओ। वहाँ सभी अकेले हैं और बचाने वाला कोई भी नहीं है। वह आदमी भी चिल्ला रहा है। वहाँ कोई और चिल्लाने वाला भी नहीं है। उसकी ही आवाज गूंजती है। रात गहरी होती चली गई, हाथ सर्द होने लगे, आंस पड़ रही है। सर्द है रात, हाथ ठंडे जड़ हो गए हैं। डर है कब छूट जाये झाड़ी, नीचे अनन्त खड्ड है। उसके प्राण कंप रहे हैं। वह कंप रहा है पत्ते की तरह। लेकिन कब तक पकड़े रहे? आखिर हाथ जड़ हो गए, झाड़ी छूट गई और आदमी गिर गया। लेकिन, गिरते ही उस घाटी में उसी की आवाज गूंज गई। वहाँ नीचे कोई खड्ड न था। वहां नीचे तो पत्थर ही था जिस पर वह खड़ा हो गया। उसकी हँसी की आवाज गूंजने लगा उस पहाड़ में। जहां वह चिल्लाता था—बचाओ, वहाँ वह हंस रहा है। वह हैरान हो गया कि मैं इतनी देर व्यर्थ ही चिल्लाता रहा—बचाओ। छोड़ देता बचने का ख्याल तो नीचे जगह मिल गई थी।

हम सब बाहर घूम रहे हैं। घूम रहे हैं, भटक रहे हैं। हजार-हजार कामों में उलझा रहे हैं अपने को एक जगह से बचाने के लिए। जो हम हैं, वहाँ हम नहीं जाना चाहते। वहां अनन्त खड्ड हैं, लेकिन उस खड्ड की खूबी यही है। उस (Abescy) उस (Infinite Abescy) उस अंतहीन खड्डे की, उस गहराई की खूबी यही है कि जो उसमें गिरा, वह स्वयं गहराई हो गया। जो स्वयं गहराई हो गया, उसको गिरने का कोई उपाय ही न रहा। गिर तो वह सकता है जो गहराई से अलग हो। अगर हम खुद गहराई हैं तो गिरेगा कौन? गिरेगा कौन? एक बार हम भीतर जायें और गहराई के साथ एक हो जावें, तो मिल गई वह चट्टान, जिससे कभी हम गिर नहीं सकते। लेकिन भीतर जाने का डर है और भीतर कोई नहीं जाना चाहता है। और जो आदमी अपने भीतर न गया हो, वह कहीं भी नहीं गया है जानना। चाहे वह सारी पृथ्वी का चक्कर लगा ले। अब उपाय है कि चाँद पर चला जाय, कल उपाय होंगे—शुक्र पर चला जाय। वह सारी दुनिया में कहीं भी चला जाय। लेकिन जो आदमी अपने भीतर नहीं गया है, वह कहीं भी नहीं गया। उसका जाना बिल्कुल भ्रम है (Illusory) है,

यात्रा है। जिसमें उसे लग रहा है कि जा रहा हूं, लेकिन कहीं जा नहीं रहा। जैसे कोई आदमी एक रात सो जाय और सपना देखे। सपना देखे कि दूर चला गया है, दूर चला गया है। सोया है अहमदाबाद में और टिम्बकटू पहुंच गया है, कलकत्ता पहुंच गया है, टोकियो पहुंच गया है। सोया है अहमदाबाद में और सपने में टिम्बकटू पहुंच गया है। रात भर चलता रहा है, न मालूम कितनी यात्रा की है और सुबह जाग के पाता है कि मैं तो वहीं हूं, जहाँ था। सब सपने में हुआ है। हम अपने से बाहर कितनी यात्रायें करें, जब भी हम जागेंगे, हम पायेंगे कि हम वहीं हैं, जहाँ थे। बाहर शरीर कहीं और हो सकता है। अहमदाबाद को जगह टोकियो में हो सकता है, लेकिन हम जहाँ हैं भीतर, टोकियो जाने से उसमें कोई फर्क नहीं पड़ेगा। हम वहीं होंगे। वही होंगे। चांद पर जाने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा। आर्मस्ट्रांग भीतर की दुनिया में जहाँ पृथ्वी पर था, चाँद पर पहुंच कर भी वहीं होगा। चांद की यात्रा से भीतर कहीं कोई जाना नहीं हो सकता है। कितना ही हम पहुंचते हुए मालूम पड़ें, हम कहीं पहुंचते नहीं।

"अलाइस इन वंडर लैण्ड"—एक छोटी सी कहानी है। अलाइस नाम की लड़की परियों के देश में पहुंच गई है। थक गई, लम्बी यात्रा है। जमीन से परियों के देश में पहुंची है, भूख लगी है, चारों तरफ देखती है। हरियाली से फूलों से लदे वृक्ष हैं। दूर ही एक बड़े वृक्ष की घनी छाया में परियों की रानी खड़ी है। उसके हाथ में मिठाइयों से भरे हुए थाल हैं और वह अलाइस को बुला रही है कि आ ... आ। उसकी आवाज सुनाई पड़ती है कि आ....। उसका हाथ दिखाई पड़ता है कि आ। उसकी निमंत्रण देती आंखें दिखाई पड़ती है कि आ..... ... और भूख—वह अलाइस दौड़ना शुरू कर देती है, पास ही है वह रानी, यह रही, अभी हम पहुंच जायेंगे। सूरज ऊग रहा है। अलाइस दौड़ रही है। दौड़ती चली गई है, दौड़ती चली गई है। छोटी बच्ची है। उसे यह भी ख्याल नहीं आ रहा है कि मैं इतना दौड़ चुकी हूं। इतना छोटा सा फासला अभी तय न हुआ होगा। फिर धूप घनी हो गई है, सूरज ऊपर आ गया है, पसीना चूने लगा है। वह खड़ी होकर देखती है, फासला तो उतना का उतना है। Distance वही का वही है। रानी अब भी खड़ी है। वह पुकार अब भी चली आ रही है आ ...। वह आंखें अब भी बुला रही हैं। भूख और बढ़ गई है। भोजन और भी दिखाई पड़ने लगा है और फासला उतना ही है। वह अलाइस चिल्ला के कहती है—यह कैसी दुनिया है, तुम्हारी आवाज सुनाई पड़ती है तुम्हारी आखें बुलाती हैं, तुम्हारा हाथ पुकारता है। भूख मुझे तेजी से है। मैं इतनी तेजी से दौड़ रही हूं लेकिन फासला कम नहीं होता। वह रानी कहती है—बातों में समय खराब मत कर, दौड़, जो बातों में समय खराब कर देते हैं वह चूक जाते हैं। तू दौड़, तेजी से दौड़, और तेजी से दौड़ अगर नहीं पहुंचता तो कारण यह है कि तू बहुत धीमे दौड़ती है। अलाइस और तेजी से दौड़ती है। गणित तो यही है। अगर नहीं पहुंचते तो तेजी से दौड़ो। नहीं पहुंच रहे हो तो एक ही मतलब है कि धीमे चल रहे होंगे। अलाइस और तेजी से दौड़ती है, जान लगा देती है। सांझ होने के करीब आ गई, सूरज उतरने लगा, अंधेरा उतरने के करीब है। वह खड़े होके चिल्लाती है। दिन भर की भूख, पसीने से लथपथ, फासला उतना का उतना है। वह चिल्ला के पूंछती है। यह कैसी दुनिया है तुम्हारी ? सुबह से दौड़ते सांझ होने के करीब आ गई, सूरज ढलने लगा और मैं कहीं भी नहीं पहुंची हूं। फासला उतना का उतना है। यह कैसी दुनिया है तुम्हारी ? ऐसी दुनिया मैंने नहीं देखी। यह दौड़ कैसी ? यह रास्ता कैसा ? वह रानी कहती है—पागल सब दुनियायें ऐसी ही हैं। जिस पृथ्वी से तू आई है, वहां भी कोई रास्ता कहीं नहीं पहुंचाता। सिर्फ लोग दौड़ते हैं और जहां पहुंचना चाहते हैं, फासला उतना ही बना रहता है जितना प्रारम्भ में था। कहीं कोई नहीं पहुंचता। दौड़ है, दौड़ है और जब दौड़ नहीं पहुंचती तो लगता है और तेजी से दौड़ो। तेजी से दौड़ नहीं पहुंचाती तो हम सोचते हैं पैरों में चाक बांधो, बैलगाड़ी को हवाई जहाज बनाओ, हवाई जहाज को जेट बनाओ और जेट को अंतरिक्ष-यान बनाओ। पहुंच नहीं पा रहे हो तो गति को बढ़ाओ। Speed को बढ़ाओ। सारी दुनिया में Speed बढ़ाने का और कोई कारण नहीं है। कारण एक ही है कि यह शक हो गया है आदमी को—कि जहां पहुंचना है, वहां पहुंच नहीं पा रहे हैं। गति कुछ कम है, गति तेज होनी चाहिए

तो गति को तेज करो। तेज करो इतना तेज करो कि हम पहुंच जायें। लेकिन अल्लाइस भी बच्ची थी और हम भी बच्चे हैं। आदमी भी बच्चा है। आदमी प्रौढ़ नहीं है। धीमी और तेज दौड़ का सवाल नहीं है। जहां हमें दौड़ना है वह जगह भीतर है और जहां हम दौड़ रहे हैं, वह जगह बाहर है। जहां हमें पहुंचना है, वहां हम जाना नहीं चाहते और जहां हमें पहुंचना नहीं है, वहां हम दौड़े चले जा रहे हैं।

कोई भी आदमी किसकी खोज में है? शायद ही हम कभी अपने से पूँछते हैं कि मेरी खोज क्या है? शायद हम जरूरी सवाल पूँछते ही नहीं। क्योंकि जरूरी सवाल चिन्ता पैदा करते हैं। हम बेकार की बातें पूंछते हैं कि भगवान ने दुनिया बनाई कि नहीं? यह दो कौड़ी की बात है, इससे क्या मतलब? भगवान समझे बनाने वाला। समझे न समझे, मुझे और आपको क्या प्रयोजन? मगर हम ऐसी बात पूँछते हैं जो हमारी चिन्ता नहीं है। बनाई हो तो ठीक, न बनाई हो तो ठीक।

मैं एक गांव में ठहरा था। उस गांव के दो बूढ़े आदमी मेरे पास आए। एक जैन है एक हिन्दू है। दोनों बूढ़े हैं, सत्तर के ऊपर उम्र है। उन दोनों ने मुझे आके कहा कि हम एक सवाल लेके आए हैं। हम बीस साल से दोनों पड़ोसी हैं और हम दोनों बीस साल से विवाद कर रहे हैं। हिन्दू साथी कहता है कि भगवान है बनाने वाला दुनिया का और जैन साथी कहता है कि दुनिया को किसी ने नहीं बनाया। दुनिया स्वयं है, अपने आप बन गई है। हम इससे विवाद करते चले आ रहे हैं। बीस साल हो गए कुछ निर्णय नहीं होता। आपसे हम पूँछने आए हैं कि क्या सही है? मैंने उनसे पूँछा कि अगर निर्णय हो जाय। निर्णय हो जाये कि दुनिया भगवान ने बनाई फिर आप क्या करियेगा? या निर्णय हो जाये कि दुनिया भगवान ने नहीं बनाई, फिर आप क्या करियेगा? उन्होंने कहा - करना क्या है, निर्णय की बात है। मैंने उनसे कहा कि आपकी जिन्दगी से इसका क्या सम्बन्ध है? आपको क्या होगा इससे फर्क? आस्तिक भी वैसे ही जी रहा है, नास्तिक भी वैसे ही जी रहा है। हिन्दू भी वैसे ही जी रहा है, मुसलमान भी वैसे ही जी रहा है। साफ बात है कि आस्तिक नास्तिक की लड़ाई, बेईमानी की बातें रही होंगी, नहीं तो जिन्दगी अलग होनी चाहिए। साफ बात है कि हिन्दू-मुसलमान नासमझी की बातों पर लड़ रहे होंगे। नहीं तो जिन्दगी अलग होनी चाहिए। हम सबकी जिन्दगी एक सी है और हमारे सबके सवाल अलग हैं और जवाब अलग हैं। हमारे सवाल भी बेकार होंगे, जवाब भी बेकार होंगे, नहीं तो जिन्दगी बदलनी चाहिए। शायद जिन्दगी के लिए जो जरूरी है, वह हम पूँछते नहीं। हम वह पूँछते हैं जो बेकार है। आराम कुर्सी पर टिककर जिसकी बात की जा सकती है। जिसके लिए जिन्दगी को बदलने की कोई जरूरत नहीं पड़ती। एक बुनियादी सवाल है जो आदमी अपने से नहीं पूँछता कि मैं किसकी खोज में हूं? हो सकता है सवाल कभी हमने पूँछा भी हो और जवाब भी हमें आया हो। किसी आदमी ने सोचा हो कि मैं धन की खोज में हूं। किसी आदमी ने सोचा हो कि मैं पद की खोज में हूं। किसी आदमी ने सोचा हो कि मैं यश की खोज में हूं। सवाल आके जवाब मिल गए होंगे। लेकिन ठीक से शायद नहीं पूँछा या बहुत गहरे नहीं पूँछा, क्योंकि जब किसी आदमी को जवाब मिलता है कि मैं धन की खोज में हूं। तब भी उसे पूँछना चाहिए कि धन की खोज में मैं किसलिए हूं? क्या धन हो अपने आप में अंत है? धन मिल जावेगा, बात समाप्त हो जावेगी? यश की खोज में, मैं किसलिए हूं? अगर यश मिल जायेगा तो बात खत्म हो जायेगी? सारी दुनिया मेरे यश से भर जाय, तो बात पूरी हो जायेगी? मेरी यात्रा समाप्त? फिर मुझे करने को कुछ नहीं रह जायेगा? सारी दुनिया का धन मुझे मिल जाये तो मेरी यात्रा पूरी हो जायगी? मैं Fulfilled हो जाऊंगा? हो जायेगी मेरी स्थिति? नहीं .....। तब सवाल शायद ऐसा उठेगा कि धन भी हम किसी और चीज के लिए चाह रहे है। शायद हमें लगता है कि भीतर निर्धन हैं तो बाहर धन इकट्ठा करके धनी हो जायें। भीतर गरीबी लगती है, दीनता लगती है तो धन के ढेर लगा

लूं। मिटा दूं दीनता को। लेकिन दीनता अगर भीतर मालूम पड़ती है तो बाहर का धन भीतर की दीनता को कैसे मिटाएगा ? इसलिए सबसे बड़ा दीनता उस दिन पता पड़ती है जब धन के ढेर लग जाते हैं और ढेर के पास खड़ा आदमी पाता है कि मैं उतना का उतना गरीब हूं। गरीब की एक तकलीफ है कि वह गरीब है। अमीर की एक और बड़ी तकलीफ है कि वह अमीर भी है और गरीब भी है।

कोई दस साल हुए। मैं जयपुर में मेहमान था। एक सभा में बोलता था एक बुड्ढा मेरे बोलने के बाद उठा। कोई ७५ वर्ष की उम्र होगी। हाथ कांपते थे और उसने आके मेरे पास ... होंगे कोई पांच हजार रुपये के नोट। वह मेरे पास रख दिए मुझे नमस्कार किया। मैंने उस बूढ़े आदमी को कहा आपका नमस्कार स्वीकार कर लेता हूं, रुपये की अभी जरूरत नहीं है। कभी पड़ सकती है। जब पड़ेगी जरूरत, तब आपको निवेदन कर दूंगा। अभी रुपये रख लें। मुझे ख्याल न था कि यह परिणाम होगा, आशा भी नहीं थी। क्योंकि उस जैसे आदमी मिलने मुश्किल हो गए हैं। उस आदमी को मैंने चुपचाप खड़े पाया। वह कुछ भी नहीं बोला तो मैंने ऊपर आँखें उठाकर देखा, उस बूढ़े की आँखों से आँसू बहे जा रहे हैं, मैं बहुत घबड़ाया। मैंने हिलाया कि क्या हो गया ? आप दुखी हो गए ? माफ करें दुख मैंने दिया हो। उन्होंने कहा—दुख बहुत दे दिया, क्योंकि मैं बहुत गरीब आदमी हूं। मेरे पास सिवाय रुपये के और कुछ भी देने को नहीं है। कुछ देने का मन हो गया है आपको, और जब कोई मेरे रुपये को इन्कार कर देता है तो मैं एकदम Impotent, एकदम नपुंसक हो जाता हूं। मेरे पास और कुछ भी नहीं। पत्नी को देने को मेरे पास प्रेम नहीं है, सिर्फ गहने दे सकता हूं। बेटों को देने के लिए मेरे पास ज्ञान नहीं है सिर्फ रुपये दे सकता हूं। मित्रों को देने के लिए मेरे पास मित्रता नहीं है। मेरे पास कुछ भी नहीं है सिवाय रुपये के। क्योंकि मैंने सारी जिन्दगी रुपये में लगा दी। सोचा था जिन्दगी की शुरुआत में कि रुपया सब कुछ है। अब मैं जानता हूं कि रुपया भी इकट्ठा हो गया और मैं नाकुछ हो गया हूं। यह रुपये उठा के आप फाड़ के फेंक दें, लेकिन मुझे वापस मत करें। मेरे पास और कुछ भी नहीं है। उस बूढ़े आदमी की आँखों में झांक के, मुझे पहली बार पता चला कि धन का संग्रह किसी आदमी को धनी नहीं बना सकता। वह तो भ्रम हमारा इसलिए नहीं टूटता क्योंकि कभी धन इकट्ठे ही नहीं हो पाता। इसलिए भ्रम जारी रहता है या कभी इकट्ठा भी हो जाता है, तो हमसे आगे और लोग होते हैं, जिनके पास ज्यादा होता है। भ्रम जारी रहता है। किसी भी आदमी को सारा दुनिया की दौलत दे दो और वह उस दिन सन्यासी होना चाहेगा। वह एक क्षण नहीं रुक सकता। वह तो दुर्भाग्य यह है कि दौलत सबको नहीं मिल पाती, इसलिए आदमी धन से बंधा रह जाता है। गरीबी मैं मिटाने की बात करता हूं, इसलिए नहीं कि गरीबी बहुत बुरी है। गरीबी मिटाने की बातें करता हूं, क्योंकि गरीब को धन नहीं मिल पाता और धन की आकाँक्षा सदा शेष रह जाती है। धन की आकाँक्षा बड़ी बीमारी है। दुनिया से गरीबी मिट जाय और इतना धन मिल जाय लोगों को कि धन की व्यर्थता दिख जाये, तो धन की दौड़ बन्द हो जावे। दुनियाँ जिस दिन अमीर होगी, समृद्ध होगी उस दिन धन की दौड़ मिटेगी, उसके पहले नहीं मिट सकती।

यश की पागल दौड़ है। आपकी आंखों में देखना चाहता हूं—मेरे लिए आदर, तो निश्चित ही मेरे लिए स्वयं मेरे मन में आदर नहीं है। उसकी कमी मैं दूसरों के आदर से पूरी करना चाहता हूं। जिस आदमी के मन में अपने लिए आदर है, वह दुनिया की दो कौड़ी फिक्र नहीं करता कि कौन उसके सम्बन्ध में क्या सोचता है। सोचता होगा उसे क्या प्रयोजन ? जो आदमी अपने आदर से भरा हुआ है, जिसके मन में कुछ भी अपना आदर है। वह आदमी किसी के आदर की चिन्ता नहीं करता। जिस आदमी के मन में अपना थोड़ा मान है वह न अपमान की फिक्र करता है, न सम्मान की फिक्र करता है। क्योंकि यह बेमानी बातें हैं। आपकी आँख मुझे क्या आदर दे सकती हैं,

अगर मैं ही अपने को आदर नहीं दे पा रहा हूं। हम सब अपने भीतर अनादृत हैं। हम सब अपनी ही आँखों के सामने अनादृत हैं। हमने भीतर ऐसा कुछ भी तो नहीं पाया, जो हमें आदर से भर दे—अपने लिए। इसलिए हम दूसरे की आँखों में आदर को खोजते हुए घूम रहे हैं। कितनी ही आँखों से आदर इकट्ठा करलो, क्या फर्क पड़ेगा? आदर इकट्ठा हो जायेगा तालियों की गूँज भर जायेगी। फूल-मालाओं के ढेर लग जायेंगे और वह आदमी उनके बगल में खड़ा है, वह कैसे बदल जायेगा? वह तो वही का वही होगा जो कल था। जब तालियाँ नहीं बजी थीं, फूल मालाएँ नहीं पड़ी थीं, रथ नहीं सजे थे और सिंहासनों पर बैठने का अवसर नहीं आया था। सिंहासनों पर वही आदमी चढ़ता है न! जो सिंहासन से नीचे खड़ा था। आदमी कैसे बदल जायेगा? यश की कोई यात्रा कहाँ ले जायेगी, आदमी तो वहीं का वहीं होगा जहाँ था। लेकिन जहाँ हम हैं, वहां हम झांकना नहीं चाहते। धन, यश, पद दौड़ है। हम दौड़ रहे हैं, हम किसी और कारण से नहीं दौड़ रहे हैं। लोग सोचते हैं हम किसी चीज को पाने के लिए दौड़ रहे हैं। मैं ऐसा नहीं सोचता। मैं सोचता हूं, यहां कोई भीतर है जिसे बुलाने के लिए दौड़ रहे हैं। वहां आगे पाने को कुछ भी नहीं है। यहाँ पीछे बुलाने को कुछ है, जिसको वजह से हम भाग रहे हैं। आदमी प्रेम में भूल जाना चाहता है। किसको भूल जाना चाहता है प्रेम में? अपने को भूल जाना चाहता है। शराब में किसको भूल जाना चाहता है? संगीत में किसको भूल जाना चाहता है? प्रार्थना में, पूजा में किसको भूल जाना चाहता है? अपने को भूल जाना चाहता है। अपने से दौड़ चल रही है, अपने को भुलाने की। एक Escape, एक पलायन चल रहा है। एक बेहोशी चल रही है कि कैसे अपने को भूल जाऊं। लेकिन यह अपने से भूलने की जरूरत क्या है? इतना डर क्या है अपने को भूलने का? यह अपने को भूलने की इतनी चेष्टा और दौड़ क्यों है? निश्चित ही भीतर कोई Abescy, कोई गहराई है। कोई ऐसी गहराई कि प्राण कंपते हैं। पीछे लौट के देखने की हिम्मत नहीं जुटती, तो बाहर ही बाहर देखे चले जाते हैं। दूसरे को देखने में समय गवां देते हैं, ताकि अपने को न देखना पड़े। दूसरे के साथ वक्त गुजार देते हैं, ताकि अपने साथ वक्त न गुजारना पड़े। भूले रहते हैं, Occupied उलझे रहते हैं ताकि झलक नार्मल हो जाय अपनी।

एक फकीर था गुरजियेफ। कुछ लोग उसके पास गए थे और उससे कहने लगे कि हम स्वयं में झांकना चाहते हैं। कौन सी गहराइयों की बातें करते हैं, फकीर दुनिया के? हम उन गहराइयों में झांकना चाहते हैं। गुरजियेफ ने कहा—सच! तय करके आए हो? तो आओ मेरे साथ लेकिन एक शर्त है। स्वयं में झाँकना हो तो दूसरे को भूल जाना पड़ेगा, क्योंकि दूसरे को जब तक याद किए हो, तब तक स्वयं में उतरने का कोई उपाय नहीं। दूसरा खूँटी की तरह कामकर रहा है जिसको पकड़ के हम अपने भीतर जाने से बचें। वह जो आदमी लटक गया था झाड़ी को पकड़के हम सब दूसरों को पकड़कर लटक गए। पति पत्नी को पकड़े हुए है। पत्नी, पति को पकड़े हुए है। बेटा बाप को पकड़े हुए है, बाप बेटे को। मित्र मित्र को। कोई नहीं मिलता तो दुश्मन तक को आदमी पकड़ के लटक जाता है। लेकिन कुछ मिलना चाहिए। भगवान, धर्म, प्रार्थना, पूजा कुछ भी मिल जाय। हम खूँटी पकड़ के लटक जाना चाहते हैं। गुरजियेफ ने कहा—अगर स्वयं की गहराईयां जाननी हैं तो दूसरे को छोड़ना पड़ेगा। उन लोगों ने कहा हम राजी हैं। गुरजियेफ उन्हें दूर एक छोटे से जंगल में ले गया। तीस आदमी हैं। एक ही मकान के भीतर तीन महीने रहना है और तीसों आदमियों से कहा ध्यान रहे, सब इस तरह रहना जैसे तुम अकेले हो। दूसरे की बात मत करना कि दूसरा है। इसकी स्वीकृति भी मत मानना मन में। दूसरा मौजूद है इसको भूल जाओ। इस मकान में तीस लोग नहीं हैं, एक ही आदमी है तुम्हीं हो। बाकी उन्तीस को मिटा डालो। देखना भी मत दूसरे की तरफ। बोलना भी मत दूसरे से। अगर राह चलते दूसरा मिल जाय तो पहचानना भी मत, आंख से भी इशारा

मत करना । अगर तुम्हारा पैर लग जाय तो क्षमा मत मांगना, क्योंकि दूसरा यहां है ही नहीं । तुम तीस यहां ऐसे रहोगे जैसे एक, एक और सच्चाई यही है कि दुनिया में तीस नहीं, तीन अरब आदमी हैं, तो भी गहरे में एक एक ही हैं । तीन अरब कहीं भी नहीं । यह सब गणित का भ्रम है। Mathematical illusions है। यहां दुनिया में एक सिर्फ, एक ही है । एक और एक और एक— इनका जोड़ होके तीन नही होते तीन एक रह जाते हैं। सारी दुनिया में एक आदमी है । एक, एक ही आदमी है । गणित का भ्रम है कि लगता है यहाँ पाँच सौ आदमी हैं । पाँच सौ आदमी नहीं है, एक एक करके पांच सौ एक हैं । पांच सौ नहीं हैं । पांच सौ का शब्द बिल्कुल झूठा है । एक गणित से पैदा हुआ भ्रम है । गणित तक भ्रम पैदा कर देता है, जो कि बड़ी साईन्टिफिक बात समझी जाती है, वह भी भ्रम पैदा कर देता है ।

गुरजयेफ ने कहा—एक, एक है । यहां तीस और एक एक करके तुम जीना । उन्तीस को भूल जाओ, जाने दो, खूंटी मत बनाना किसी को, कहीं रुकना नहीं । भीतर जाना है और जिस आदमी ने दूसरे को जरा भी पहचानने की कोशिश की, उसे मैं दरवाजे के बाहर कर दूंगा । पन्द्रह दिन के भीतर तीस आदमी में तीन आदमी बचे । सत्ताइस आदमियों को दरवाजे के बाहर कर देना पड़ा, क्योंकि बड़ा मुश्किल था दूसरे को भूलना । इसमें दूसरा कारण नहीं था, बड़ा मुश्किल है दूसरे को भूलना । आप यह मत समझना कि यह आदमी इतना सुन्दर है कि भूलता नहीं । इस भ्रम में पड़ना ही मत । कौन सुन्दर है ? कौन असुन्दर है ? कुछ खूंटियों को हम सुन्दर कहते हैं कुछ को असुन्दर कहते हैं । जिस खूंटी पर हमको अटकना होता है उसको हम सुन्दर कहने लगते हैं । जिससे भागना होता है, उसे असुन्दर कहने लगते हैं । जिसको हम सुन्दर कहते हैं, कोई उसको असुन्दर कहता है । जिसको कोई असुन्दर कह रहा है, कोई उसको सुन्दर कहे चला जा रहा है ।

मजनूँ को बुलाया था, उसके गांव के राजा ने और कहा था—तू बिल्कुल पागल है । लैला तो बदशक्ल लड़की है, ऐसी साधारण लड़की के पीछे क्यों मरा जाता है । हम तुझे सुन्दर लड़कियां खोज देते हैं । तेरे जैसा कीमती आदमी, सुन्दर युवक एक साधारण लड़की के पीछे दीवाना क्यों है ? हम तेरे लिए सुन्दर लड़कियाँ बुलाए देते हैं, आ..... राजमहल में । मजनूँ खूब हंसने लगा, उसने राजा से कहा—कि तुम्हें लैला का कोई पता ही नहीं । राजा ने कहा मैं उसे जानता हूं । भलीभांति परिचित हूं । मजनूँ ने कहा – न तुम जान सकते, न तुम परिचित हो सकते, क्योंकि लैला में सौंदर्य देखने के लिए मजनूं की आंख चाहिए । उसमें मुझे सौंदर्य दिखाई पड़ता है । राजा को नहीं दिखाई पडता, उसे दिखाई पड़ता है । जहाँ हम लटकना चाहते हैं, जहाँ उलझना चाहते हैं, वहाँ हम सौंदर्य पैदा करते हैं । सौंदर्य कहीं है नहीं । हमारा है इसलिए हम किसी भी चीज में सौंदर्य पैदा कर लेते हैं ।

पुराने जमाने में गुलाब का फूल सुन्दर था । कभी सुना था किसी राजमहल में कैकटस (Cactus) और धतूरा, राजमहल में चले गए हों ? यह बिल्कुल अस्पृश्य, शूद्र किस्म की चीजें थीं । कैकटस शूद्र है । पुराने जमाने से, कभी भी ब्राम्हमणों को दुनिया में उसकी कोई जगह न थी । गुलाब के फूल की बात और है, राजमहलों में प्रवेश पाता था । लेकिन अब पचास वर्षों से कैक्टस ने गुलाब को हरा दिया । गुलाब हो गया महल के बाहर, कैक्टस आ गया महल के भीतर । आज जो सुसंस्कृत है, उसके घर में कैक्टस होनी ही चाहिए, नहीं तो शिक्षित नहीं । क्या हो गया ? मामला क्या हो गया ? यह कैक्टस पहले भी तो था । गांव के बाहर खेत के किनारे पर जानवरों से बचाने का काम करता था । आज अचानक कैक्टस ने हमला बोल दिया । सब गुलाबों को बाहर कर दिया, कैक्टस भीतर आ गया । कांटा भी सुन्दर हो गया । असल में गुलाब से ऊब गए, बहुत हो गया, गुलाब भी उबा देता है । ऊब पैदा हो गई । अब गुलाब अटकने के लिए काफी नहीं मालूम पड़ता, Burden लाने लगा है । अब कुछ और लाना पड़ेगा । इसीलिए तो रोज फैशन बदल जाती है । कल जो बहुत सुन्दर मालूम देता था आज बिल्कुल Out of date हो जाता है । कुछ भी Out of date हो सकता है । जो आज

यह सुन्दर है वह कल असुन्दर हो जायेगा। सुन्दर हम कल्पित करते हैं, सुन्दर कुछ भी नहीं है। चीन में एक तरह की शक्ल खूबसूरत होती है, उसको यहां लाओ तो शादी करना मुश्किल। आफ्रीका में एक तरह के होंट सुन्दर होते हैं, उनको यहां ले आओ तो बहुत मुश्किल, कोई उन होंटों को चूमने को राजी नहीं होगा। लेकिन आफ्रीका की लड़कियां होंटों को खींच-खींच करके चौड़ा करती हैं। क्योंकि जितना लम्बा-चौड़ा होंट हो उतना ही सुन्दर है। यहां की लड़की का होंट लम्बा मोटा हो तो गई। पतला होंट चाहिए। लेकिन कल आफ्रीका यहाँ आ सकता है। कैक्टस घर में घुस सकता है दिक्कत क्या है? इसमें कोई कठिनाई नहीं हैं। सफेद रंग से लोग अब जा सकते हैं, काला रंग सुन्दर हो सकता है। कभी सुन्दर रहा भी है। कृष्ण को हमने सांवला बनाया है। गोरे में यह बात नहीं है। गोरा बहुत बाद में आया। सांवला बहुत पहले सुन्दर था, गया। लेकिन कल लौट सकता है। हम खूंटिया बनाते हैं सुन्दर की, दूसरा हमें रोकता नहीं। गुरजियेफ ने कहा दूसरा नहीं रोकता है तुम्हें, तुम रुकना चाहते हो, इसलिए कोई भी बहाना खोजते हो कि दूसरे में रुक जाओ। दोस्ती मिल जाए तो दोस्ती, दुश्मनी मिल जाए तो दुश्मनी लेकिन दूसरों में उलझे रहो, ताकि खुद में न जाना पड़े। उसने सत्ताइस लोगों को बाहर कर दिया, तीन लोग रह गए हैं। उन तीन लोगों को जो अनुभव हुआ, वह समझने जैसा है। जैसे-जैसे दिन बीते और जैसे-जैसे वे एक दूसरे को भूलते चले गए, बाहर की दुनिया विदा होने लगी। क्योंकि ध्यान रहे, हम जिस चीज पर ध्यान देते हैं वही मौजूद होता है। जिस पर ध्यान नहीं देते वह विदा हो जाता है। ध्यान मौजूदगी बनाती है। ध्यान गया तो मौजूदगी विदा हो जाती है। आप पर मैं ध्यान दूं तो आप हैं मेरे लिए। अगर आप पर से मेरा ध्यान हट जाये तो आप गए। अभी मैं यहाँ बोल रहा हूं और एक आदमी भागा हुआ आवे और आपके कान में कहे— घर में आग लग गई है। मैं गया, यह सब गए। आप भागे, ध्यान और जगह पहुंच गया। फिर यह सब भूल गया, यहाँ कौन था, कौन नहीं था। यह सवाल नहीं ही रहा यह बात खत्म हो गई। जैसे-जैसे उन्होंने दूसरे से ध्यान हटाया है, और कुछ नहीं किया, सिर्फ दूसरे को भूलते चले गए। बाहर की रेखा धूमिल होने लगीं। बाहर के चित्र, तस्वीरें होने लगे। अभी तो हमें बाहर की तस्वीरें भी असली मालूम पड़ती हैं।

फिल्म देखने कोई जाता है, वहाँ कुछ भी नहीं है। वहाँ बिल्कुल खाली है। पर्दे से खाली कोई चीज होती ही नहीं। पर्दे के खालीपन के लिए हजारों रुपये खर्च करन पड़ते हैं। जितना कीमती पर्दा, उतना खाली। जितना खाली खरीदना हो, उतने रुपये खर्च करो। पचास हजार, लाख रुपये का भी पर्दा होता है। उसकी कीमत उसी मात्रा में बढ़ती है जिस मात्रा में वह खाली होता है, उसमें रेखा भी नहीं होती। तो वह खाली पर्दा है और विद्युत का खेल है, धूप—छाया का। और लोग रो रहे हैं और लोग मरे जा रहे हैं। यहाँ तक पागल लोग हैं कि अगर सुन्दर लड़की नाचती हो तो वे नीचे झांक-झांक कर देखने की कोशिश करते हैं कि पैर और थोड़े दिखाई पड़ जायें। पर्दे पर भी! वहाँ कुछ भी नहीं है। वहां सिर्फ धूप-छांव का खेल है लेकिन आंसू बहे जा रहे हैं, लोगों के रूमाल गीले हो जाते हैं। सिनेमा गृह के बाहर अगर लोगों के रूमाल जांचे जायें, तो पता चले कि कितने लोग रोए हैं। वह तो अंधेरा रहता है, बड़ी सुविधा रहती है। हांलाकि पास-पड़ोस लोग देख लेते हैं कि किसी को पता तो नहीं चल रहा, फिर अपना रो लेते हैं। नाटक में भी आदमी रोता है! चित्र को भी इतना असली, समझ लेता है! क्यों भूल जाते हैं आप कि यह फिल्म है? तीन घण्टे की वजह से भूल जाते हैं। ध्यान रहे तीन घण्टे एक ही बात पर ध्यान है तो, ध्यान जिस चीज पर भी अटक जाता है, वही सत्य हो जाती है। तीन घण्टे एक चीज को निरंतर देखने का परिणाम है यह। फिल्म का परिणाम है यह। आपने ख्याल नहीं किया होगा, तीन घण्टे पलक झपकती भी नहींहै फिल्म देखने में। इसीलिए तो आंख थकी हुई मालूम पड़ती है बाहर आके और रात में नींद मुश्किल से आती है। तीन घण्टे आंख की पलक भी नहीं झपकती, ध्यान

पूरा अटक जाता है लग जाता है, फिल्म में। पुराने सन्यासियों को बड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। फिल्म नाटक का काम कर रही है, आंखें रुक गई हैं। पलकें झपकती नहीं हैं क्योंकि पता नहीं जरा पलक झपके और क्या चूक जाए। हालांकि चूकने को कुछ भी नहीं है। सिर्फ खाली पर्दा है लेकिन चूकने का डर है। फिल्म इतनी Real, इतनी वास्तविक मालूम पड़ने लगती है क्यों? तीन घण्टे निरंतर ध्यान सत्यता दे देता है। जहाँ कुछ भी नहीं है, वहाँ सत्य खड़ा हो जाता है। और जहाँ सत्य है, गलत नहीं है। बाहर दुनिया है। एक वास्तविक दुनिया बाहर है। आप वहाँ हो, मैं यहां हूं। लेकिन अगर ध्यान खिंच आए वापिस तो बाहर की दुनिया खाली पर्दा हो जाती है। वहाँ कोई नहीं रह जाता। सवाल ध्यान का है कि ध्यान कहाँ है? वही सत्य बनना शुरु हो जाता है। बिल्कुल असत्य पर भी सत्य निर्मित होता है ध्यान देने से। और अगर ध्यान सतत् हो तो आदमी किसी भी तरह की कल्पना को सत्य कर लेता है। भगवान वगैरह के जो दर्शन होते हैं, वह इसी ढंग से होते हैं. कल्पना पर निरंतर ध्यान देने से। एक आदमी दिन रात रो रहा है कि प्राण प्यारे दर्शन दो, हे मुरली--मनोहर दर्शन दो। अब मुरली मनोहर के वश में नहीं है दर्शन देना किसी को। सिर्फ एक तस्वीर है जो इस चिल्लाने वाले के मन में बैठी है। जितना यह चिल्लायेगा, जितना रोयेगा, जितना आंखों को झुकायेगा, ध्यान केन्द्रित करेगा, मुरली-मनोहर प्रगट होने शुरु हो जायेंगे। वे खड़े हो जायेंगे, मुरली बजने लगेगी, नाच शुरु हो जायेगा। यह इस आदमी के ध्यान का फल है यह एक तरह का Mental Creation है। यह एक तरह का मनोसृजन है। हमें जो दुनिया चारों तरफ है, वह तथ्य की है। जब अतथ्य, झूठ, असत्य, कल्पना ध्यान देने से सत्य हो जाते हैं, तो ध्यान हटा लेने से तथ्य भी माया हो जाता है। ध्यान की बात है। सारा सवाल ध्यान का है।

एक लड़का हाकी खेल रहा है। पैर में चोट लग गई है खून बह रहा है। अब पैर में चोट लगेगी तो पता नहीं चलेगा? पता तो चला होगा, पैर ने खबर भेजी होगी। लेकिन जिस ध्यान को खबर मिलनी चाहिए वह कहीं और है। तो पैर खबर देता रहेगा, घन्टी बजती रहेगी, लेकिन Attention मौजूद नहीं है। ध्यान खेल में तल्लीन है। मालिक मौजूद नहीं है मस्तिष्क में, वह कहीं और गया है। तो पैर घण्टी बजाता रहेगा कि चोट लग गई, खून बह रहा है। चोट लग गई, खून बह रहा है। लेकिन उस आदमी को कुछ पता नहीं। सब को दिखाई पड़ेगा, खेल देखने वालों को कि लड़के के पैर में चोट है खून नीचे गिर रहा है, बूंदे टपक रही हैं। खेल बन्द हुआ, ध्यान वापिस लौटा और वह लड़का पैर पकड़ के बैठ गया और कह रहा है—बहुत चोट लग गई, बहुत दर्द हो रहा है। उससे पूछो कि चोट बहुत देर से लगी है, दर्द भी बहुत देर से हो रहा है, तुम कहां थे? वह कहीं और था, वह खेल में था।

ध्यान जहाँ है वहां जगत शुरु होता है। ध्यान जहाँ से सिमट आता है जगत वहाँ विलीन हो जाता है। हम बाहर ध्यान दे रहे हैं तो बाहर जगत बहुत वास्तविक हो गया। और भीतर हमने ध्यान नहीं दिया, भीतर शून्य, सब खाली हो गया। वहाँ कुछ भी नहीं रह गया। तीन लोग जो बच गए; उस फकीर के जंगल में। वे भूलते चले गए, रोज ध्यान छोड़ते चले गए। उन्होंने फिक्र बाहर की, उन्होंने बाहर की तरफ से रस छोड़ा, उन्होंने बाहर कुछ है इसका विचार छोड़ा। वे बाहर से छोड़ते गए, छाँटते गए। तीन महीने पूरे हुए। तीन महीने बाद, उनमें से एक ने लिखा कि आश्चर्य! जिस क्षण बाहर से ध्यान गया, उसी क्षण हम भीतर गहराई में खड़े हो गए, जिसका हमें कोई पता ही नहीं था। बाहर से और भीतर जाने में क्षण का भी अंतराल नहीं होता। बाहर से आदमी गया और भीतर आदमी खड़ा हो जाता है। भीतर जाने के लिए कुछ भी नहीं करना पड़ता। सिर्फ बाहर होना छोड़ना पड़ता है, सिर्फ बाहर होना छोड़ने की बात है। और हम सब बाहर हैं, इसका मतलब? इसका मतलब ध्यान बाहर है। और जहाँ हमारा ध्यान है, वहां हम एक जीवन निर्मित कर लेते हैं। एक नाटक

निर्मित कर लेते हैं। हमारे ध्यान ने कुछ परदे निर्मित किये हैं। वह समझ लेना जरूरी है। एक तो हमने वस्तुओं पर बहुत ज्यादा ध्यान दिया है। इसलिए वस्तुओं का एक जगत, हमारा एक घेरा निर्मित हो गया है। मेरा मकान, मेरा मकान क्या मतलब है ? जिस मकान पर ध्यान दिया है, वह मेरा हो गया है ध्यान देने की कई तरकीबें हैं ! पैसा खर्च करो ध्यान चला जायेगा। वह सब ध्यान देने की तरकीबें हैं।

(क्रमश)

अकुलाहट

— शिव

कौन है
जो मेरे भयंकर दुख के रहस्य को
समझे और मेरी आत्मा को मुझ पर प्रकट करे ?
मैं चारों ओर निगाह फेंकता हूं
और निराश हो जाता हूं....
कौन है जो बुझाए उस आग को
जो मेरे भीतर-बाहर हर तरफ लगी है
और जिसमें मैं जल रहा हूं ?
मेरी शिराओं में जो तूफान
उफन पड़ा है
उसे कौन थामेगा ?
आह !
कितनी दुःखदायी है यह स्मृति, कि
मैं इस संसार में एक अजनबी की तरह
भटक रहा हूं,
न मैं किसी को जानता हूं और
न ही कोई मुझे....
मैं अपनी ही आँखों में देखते हुए
डर जाता हूं
बोलता हूं तो अपना ही स्वर
खुद को अनजाना लगता है,
मैं कौन हूं ? क्या हूं ?
कहां हूं ?
कौन है जो मेरे इन रहस्यों को
मुझ पर प्रकट करे ?
—ताकि मेरी आत्मा आनंद में डूब जाय !

★

क्रांति की वैज्ञानिक प्रक्रिया

(आचार्य श्री की सहायक संपादक 'गुजरात समाचार' के साथ हुई वार्त्ता)

— पिछले अंक में आपने आचार्य श्री के इस अद्भुत दृष्टिकोण को समझा कि पिछले पांच हजार वर्ष का समाज नहीं बदला, क्रांति की सोच-विचारपूर्ण दिशा उसने नहीं ली तो प्रतिक्रियात्मक विरोध आएगा—जो कि उतना ही गलत है जितना कि आज तक का रुका हुआ समाज।—

और आगे प्रस्तुत है इस वार्त्ता की यह अंतिम किश्त :

(संकलन : जीवन जागृति केन्द्र, अहमदाबाद के सौजन्य से)

प्रश्न : अब जो क्रांतिकारी है, सच्चा क्रांतिकारी उसके बारे में पूछूँगा। क्या आपका विश्वास है कि क्रांतिकारी पाथ आप वरच्यू को फालो करे। क्रांतिकारी सदा सत्यवादी होना चाहिए, उससे किसी भी गलत काम की अपेक्षा नहीं होनी चाहिए। यदि ये बातें उसमें हैं तो वह समाज में क्रांति लाने में सफल होगा।

उत्तर : अगर कोई चीज वरच्यू है तो रिव्युल्युशनरी माइंड न तो यह तय करेगा कि वरच्यू क्या है और वरच्यू क्या नहीं है। तो पहला सवाल यह नहीं है कि कौन सा वरच्यू—पहले यह तय करियेगा कि वरच्यू क्या है और वरच्यू क्या नहीं है। यह भी हो सकता है, जिसे हम अब तक नीति और वरच्यू कहते थे वह वरच्यू हो ही नहीं। यह भी हो सकता है कि जिसके पीछे बहुत अनीति और बहुत अवगुण छिपाने का सिर्फ उपाय चला आ रहा हो और वह सिर्फ नाम हो, धोखा हो। तो रेव्युल्युशनरी माइंड किस तरह यह तय करना चाहेगा कि वरच्यू क्या है। और जो वरच्यू है उसे तो फारगो नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसे फारगो किया तो रिव्युल्युशन असंभव है। तो बुनियाद में हमें यह सोचना है कि वरच्यू क्या है। अगर सत्य होना वरच्यू है तो फारगो नहीं किया जा सकता क्योंकि इसको फारगो करके कोई क्रांति नहीं लायी जा सकती, क्योंकि इसे फारगो करके ही पूरी सोसाइटी चल रही है। यानी मामला यह है कि यह सत्य बोलने की बात वरच्यू है, इसे फारगो तो पूरी सोसाइटी कर रही है और क्रांतिकारी भी फारगो करे तो इसी सोसाइटी का हिस्सा बना रह जायगा। अगर यह सत्य बदलना वरच्यू है तो क्रांति को तो कहीं इनसिस्ट करना पड़ेगा चाहे जहाँ जाय। यानी मेरा मानना है कि सफलता का मूल्य भी क्रांतिकारी का मूल्य नहीं, यानी असफल होने की तैयारी भी क्रांतिकारी के चित्त का हिस्सा है। असल में वह प्रतिक्रियावादी के चित का हिस्सा है कि हर हालत में सफल होना। वह कंफर्मिस्ट माइंड का हिस्सा है। सक्सेस जो है वह ऐन्ड की तरह मालूम होती है कंफर्मिस्ट माइंड को और इसीलिए वह कन्फर्म करता है क्योंकि कंफर्म होना ज्यादा आसान है। सोसाइटी जो कहती है उसके साथ राजी होने से मैं जल्दी सक्सेसफुल हो सकता हूं। रेव्युल्युशनरी हारने के लिए तैयार है। यह तैयारी भी रेव्युल्युशनरी माइंड का हिस्सा है। पूरी तरह हार

जाने को तैयार हैं लेकिन नान-रेव्युल्युशनरी होने को तैयार नहीं। यानी मेरा मानना है कि रेव्युल्युशनरी की सक्सेस यदि इन-डीरिव्येल्युशन है और कोई सक्सेस नहीं है क्योंकि जिस सोसाइटी में हम जी रहे हैं उसमें रेव्युल्युशन असफल हो सकती है, होती रही है और होगी। यह कोई जल्दी नहीं है कि सफल हो ही जाय आज। हो सकती है सफल, यानी सफल होने की उसकी आकांक्षा नहीं होनी चाहिए और इसके पहले तो तय करना चाहिए कि वरच्यू क्या है और यह सारी चीजें उसे तय करनी होगी, यानी मूल्य का उसे रीकंसीडरेशन करना पड़ेगा—क्या नीति है, क्या वरच्यू है। जैसे समझ लीजिये कि कल तक हम यह वरच्यू मानते हैं कि एक आदमी ने जिस पत्नी से शादी की है उसके साथ सोना पाप नहीं है। किसी औरत से जिसकी उसकी शादी नहीं हुई है, उसके साथ सोना पाप है। हो सकता है वेल्यू यह कहे कि जिस स्त्री से प्रेम नहीं है उसके साथ सोना पाप है, चाहे वह पत्नी हो या न हो यह होने का सवाल नहीं है। और जिसके साथ प्रेम है वह चाहे पत्नी हो या न हो उसके साथ सोने में कोई पाप नहीं है। वह कहेगा कि जिस औरत से मेरा कोई प्रेम नहीं रह गया है उससे शादी इनवेल्यूड हो गयी, बात खत्म हो गयी, क्योंकि प्रेम ही शादी का अर्थ है। बात खत्म हो गयी और अगर मैं उसके साथ सोये चला जाता हूं तो मैं पापी हूं, क्रिमिनल हूं क्योंकि जिससे मेरा प्रेम नहीं है उससे मेरा क्या संबंध है, फिर उससे मेरा संबंध नहीं रह गया, वह मेरी पत्नी नहीं है। क्रांतिकारी यह कह सकता है।

एक लड़की ने अमरीका में एक बड़े न्यायालय को लिखा है कि मैं मां बनना चाहती हूं लेकिन पत्नी बनने को तैयार नहीं हूं। पत्नी बनना मुझे अपमानजनक मालूम पड़ता है और मां बनना मुझे गौरवपूर्ण मालूम पड़ता है। ऐसा लगता है कि जबतक मैं मां नहीं बनती हूं तब तक उससे ही अनसोल्ड रह गया। फिर सोसाइटी उसे क्यों मजबूर करती है। मां बनने के लिए मुझे पत्नी बनना पड़ेगा यह जबरस्ती मुझ पर क्यों थोपा जाय। पत्नी बनना मुझे अपमानजनक मालूम पड़ता है और मां बने बिना मैं कभी पूर्ण संतुष्टि नहीं मालूम कर सकती हूं अपने को और आप यह भी विकल्प देते हैं कि पत्नी बिना मैं मां नहीं बन सकती या बनी तो मेरा बच्चा अपमानित होगा। तो मैं यह पूछना चाहती हूं कि समाज का क्या हक है इस तरह की अनीति थोपने का।

क्रांतिकारी चित्त का मतलब यह होगा कि वह वरच्यू के बाबद रीकंसीडरेटिंग करेगा लेकिन यह उसे वरच्यू मालूम होगी। जैसे मैं एक लड़की को कहूंगा कि तू मां बन और तू पत्नी मत बनना और इसके लिए तू लड़ना और यूँ कहूंगा कि तेरी जिन्दगी में एक वरच्यू है। क्यों झुके? और अपने लड़के को इस बात के लिए तैयार करना कि वह इन्कार करे कि मेरा कोई पिता नहीं या मुझे पता नहीं कि कहाँ मेरा पिता है और पिता कितना बताने की कोई जरूरत नहीं है और इसमें कोई पाप नहीं है। मेरी मां काफी है। इसको तैयार करना है और मैं मानूँगा कि यह लड़का पापी नहीं है, न यह नाजायज है, न यह बुरा है, सिर्फ सोसाइटी की धारणा गलत है। तो वरच्यू क्या है, अगर सोसाइटी बदलनी है तो पहले वरच्यू की धारणा बदलनी पड़ेगी। इसीलिए मैं हवा पैदा करना चाह रहा हूं और वह हवा पैदा हो जायगी लेकिन जो वरच्यू मालूम पड़े उसपर तो क्रांतिकारी को खड़ा होना ही पड़ेगा। असफल हुई तो कोई फिकर नहीं। असफलता का क्या डर है? असफलता का डर ही कंफर्मिस्ट बनाता है। यानी मुझे लगे कि एक स्त्री के साथ बिना शादी किये रहना समाज में असफल हो जाऊंगा तो शादी कर लेनी चाहिए, शादी का ढोंग पूरा कर देना चाहिए लेकिन तब मैं सफलता के लिए उत्सुक हूं और ठीक से कहूं तो मैन आफ वरच्यू नहीं हूं और अगर यह लगता है कि मित्रता पर्याप्त है और एक स्त्री मेरे साथ रह सकती है और शादी को जोड़ना अनिवार्य नहीं है तो कोई कारण नहीं है। ताकि कल सुबह हमें लगे नमस्कार, तो नमस्कार कर सकूँ और कोई कहने वाला न हो कि नहीं, तुम्हारे ऊपर मुकदमा चलेगा तब नमस्कार हो सकता है। हम स्वतंत्र हों

और हम एक क्षण में अलग हो सकें । जिससे हम एक क्षण में अलग हो सकते हैं उनके साथ ही सिर्फ रहने का आनंद है और जिनके साथ हम अलग हो ही नहीं सकते उनके साथ रहने का आनंद खत्म हो गया है । तो वरच्यू की पूरी धारणा बदलनी पड़ेगी लेकिन यह वरच्यू मालूम पड़े क्रान्तिकारी उस पर जिद्द करेगा, नहीं तो वह क्रांतिकारी नहीं है ।

प्रश्न---क्रांतिकारी का उसके दुश्मन के साथ क्या संबंध होना चाहिए । उसका बिल्कुल सफाया कर देना चाहिए या उसे सुधारना चाहिए ? क्या दृष्टि होनी चाहिए ।

उत्तर---असल में उसे मिटा देने का ख्याल भी क्रांतिकारी नहीं है । वह कंफर्मिस्ट भी तो यही सोचता है न कि क्रांति की जो बात करे, मिटा दो उसे और अगर क्रांतिकारी भी ऐसा ही सोचता है तो मैं मानता हूं कि वह भी कंफर्मिस्ट है यानी वह राजी है उसी बातों से कि हम तुमको मिटा देंगे । क्रांतिकारी नहीं कर सकता है मिटाने की बात क्योंकि क्रांतिकारी यह भी तो मानता है कि एक एक व्यक्ति को अपने सोचने, अपने रहने, अपने जीने का हक है कि मैं अपनी बात कहूं, समझाऊँ । मिटाने का हक तो क्रांतिकारी को नहीं हो सकता है । इसलिए मैं लेनिन या स्टेलिन या माओ को बहुत क्रांतिकारी नहीं मानता । इनका बेसिक जो माइंड है वह वही है, कंफर्मिस्ट वाला है । कंफर्मिस्ट कहता था, जेल में डाल दो इस आदमी को, जान ले लो इसकी, जड़ें काट दो, इसको बचने मत दो । वही हम कर रहे हैं उसके साथ । इस मामले में तो कम से कम हम क्रांतिकारी बिल्कुल नहीं हैं । हमने उसी के रास्ते अख्तियार किये हैं । ठीक क्रांतिकारी इस भाषा में नहीं सोच सकता है क्योंकि क्रांतिकारी पहले तो व्यक्ति के मूल्य को परम मानता है, अल्टीमेट मानता है और इसीलिए तो वह सोसायटी के खिलाफ खड़ा है, नहीं तो खड़ा रहने का मतलब क्या है ।

अगर व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं है तो मेरी अकेली बात का क्या मतलब है । जब चालीस करोड़ लोग कहते हैं कि यही बात ठीक है । बात खत्म हो गई । मुझे अपनी जिद छोड़ देनी चाहिए । मैं अकेला चिल्लाऊँ कि यह गलत है तो मैं यह मानकर चल रहा हूं कि एक आदमी को भी यह हक है कि वह अपनी बात कहे चला जाय । अपनी आवाज उठाये और कल मैं आपकी गर्दन काट दूं अगर मेरे हाथ में ताकत आये तो, मैंने क्रांति की हत्या कर दी है । इसीलिए अक्सर कमजोर क्रांतिकारी सत्ता में आते ही गैर-क्रान्तिकारी हो जाते हैं । बेसिक माइंड उनका गैर क्रान्तिकारी है, इसलिए मैं मानता हूं कि स्टैलिन क्रान्तिकारी आदमी नहीं है । उसके साथ दिमाग जो है वही हारेस्ट है, वह क्रांति के चक्कर में आ गया है । लेकिन जैसे ही हुकूमत में आया है वह जार बन गया । फिर उसने वही किया जो जार ने उसके साथ किया, उससे भी ज्यादा शक्ति से किया । ठीक क्रान्तिकारी का तो मतलब यही है कि वह व्यक्ति के परम मूल्य को स्वीकार करता है इसलिए आपको दबाना, आपको धमकाना, आपको मारना, मैं तो यहां तक मानता हूं कि गांधी जी की वृत्ति क्रान्तिकारी नहीं हैं । क्योंकि वे धमकियां देते हैं, सत्याग्रह के नाम पर । आपके सामने मैं उपवास करके बैठ जाऊं तो मैं धमकी दे रहा हूं कि मर जाऊंगा । अम्बेडकर ने कहा, कि मेरा हृदय बिल्कुल परिवर्तन नहीं हुआ, गांधी सोचते हैं कि हृदय परिवर्तन हुआ तो गलत सोचते हैं । मेरा हृदय परिवर्तन हुआ सिर्फ यह सोचकर कि एक अच्छा आदमी मर जाएगा, इसलिए मैं हट जाऊं । इसलिए मैं मानता हूं कि अम्बेडकर ज्यादा अहिंसक है हट जाने में, गांधी ज्यादा हिंसक हैं उपवास करने में । यह जो अम्बेडकर की क्षमता है, अम्बेडकर भी जिद कर सकता है कि मरें, अपने आप, हम तो जिम्मेवार नहीं हैं । तुम अपनी जिद करते हो तो मर जाओ । अम्बेडकर हट गया बिना हृदय परिवर्तन के और बिना राजी हुए । सिर्फ तुम बच जाओ इसलिए मैं हट जाता हूं । और मेरी दृष्टि में अम्बेडकर ज्यादा क्रान्तिकारी सिद्ध हुआ उस घटना में बजाय गांधी के । गांधी कोई तो हैं,

अम्बेडकर व्यक्ति के जीवन को ज्यादा मूल्य दे रहा है अपने विचारों से भी। और हट रहा है बिना राजी हुए। और मेरी दृष्टि में ज्यादा क्रान्तिकारी की दृष्टि दे रहा है यह आदमी। और कन्फर्मिस्ट माइंड का होता तो वह कहता, मरो। तुम गलत हो तो अपने आप मर रहे हो। मैं जो कहता हूं ठीक है।

प्रश्नः— जैसा कि आपने कहा कि क्रान्ति कोई न कोई गैर चीज फैलाये तो क्रान्ति के लिए आदर्श क्या है ?

जो लोग ऐसी स्टेटस में एलाइट होते हैं उसके लिए आपका यह आदर्श तो ठीक है। लेकिन अगर जो उसको स्टेट पालिसी की तरह से चलाये तो वह स्टेट कैसा चले।

उत्तरः—लेकिन अब तक क्या हुआ है कि जिसको मैं हवा कह रहा हूं वह पूरी नहीं बन पाई और क्रान्तिकारी को सत्ता मिल गई। अभी तक जो हुआ है यानी अभी तक क्रांति जो है, माइनरटी का ही ख्याल था और मैजार्टी कभी उस पर राजी नहीं हुई है। इसलिए तो माइनर्टी को जब सत्ता मिली तो उसको चोट सहनी पड़ी, गालियां सहनी पड़ीं। मेरा मानना है कि गाली तभी तक होगी जब तक कि माइनर्टी मैजार्टी की हालत में न हो तब तक गाली मिलेगी। इसलिये मेरा मानना है क्रान्तिकारी को थोडी प्रतीक्षा करनी चाहिए, हवा पैदा हो, लोक मानस तैयार हो जाय तब क्रान्तिकारी को सत्ता मिले। तो जिस बड़ी मात्रा में लोक मानस तैयार होगा उसी बड़ी मात्रा में हिंसा मुश्किल हो जाएगी। फिर भी मैं यह कहता हूं कि जो मैं कह रहा हूं वह परम आइडियल की बात है। थोड़ी हिंसा माइनर्टी के साथ भी शायद रह जाय। तो उस हालत में मेरा मानना है, लेकिन ध्यान में यही होना चाहिए और इसलिए कोई भी क्रान्तिकारी सत्ता से तभी सम्बन्धित होने को राजी होना चाहिए जब मैजार्टी उसके साथ हो, नहीं तो नहीं। नहीं तो वृहद् हिंसा होगी और उस हिंसा करने में वह क्रान्तिकारी कन्फर्मिस्ट हो जाने वाला है। एक सर्किल पैदा हो गई है। मेरी दृष्टि यह है कि मूल रूपसे क्रान्तिकारी तभी राजी होगा सत्ता में जाने को जब बहुमत उसकी बात के लिए राजी हो गया है। उसने उसको परसुयेट किया। यह मेरा मानना है कि जल्दी की आदत भी गैर क्रान्तिकारी है, अधैर्य है। लेकिन सभी क्रान्तिकारी हमें दिखाई पड़ते हैं कि बहुत अधैर्य हैं। यह ऐसा हो गया है कि क्रान्तिकारी को हम सोचते हैं कि उसमें अधैर्य होना चाहिए। मेरा मानना यह है कि अधैर्य जो है वह इस बात की खबर है कि मैं जो मान रहा हूं उस पर मुझे पक्का विश्वास नहीं है। ऐसी मैं गलती में हूं। और आपसे परसुएट करने के लिए मैं पूरी तरह क्रान्ति के लिए राजी नहीं हूं। अगर थोड़ा बहुत मैं अपराधी हूं तो आपकी गर्दन पकड़ लूंगा। मुझे डर भी है और तब तक इसका मतलब क्रांतिकारी पूरा क्रान्तिकारी चित्त का नहीं है बहुत गहरे में। ऊपर इसके थोड़ा बहुत क्रान्ति का बात आयी होगी, विचार आया होगा। वह भी कन्फर्मिस्टे है और उसके हाथ में सत्ता जाना खतरनाक सिद्ध हो सकता है। क्योंकि सत्ता आते ही क्रान्ति का हिस्सा बिदा हो जाएगा। कन्फर्मिस्ट पैदा हो जायेगा। क्योंकि फिर जो यह सोसाइटी बना रही है उससे भिन्न वह बर्दाश्त नहीं करेगा। इसलिए क्रान्तिकारी सत्ता में जाते ही— मेरी दृष्टि में ट्राटस्की ज्यादा क्रान्तिकारी है स्टेलिन से और ज्यादा बैसिक क्रान्तिकारी है। स्टेलिन सत्ता में गया तो ट्राटस्की की हत्या करनी जरूरी हो गया। रूस में सबसे पहला काम क्रान्तिकारियों का हत्या करने का किया। क्योंकि जो सबसे ज्यादा खतरनाक एलीमेंट था क्योंकि जब वह क्रान्तिकारी माइंड था तो स्टेलिन से भी राजी नहीं होगा यदि वह गलत है तो इन्कार करेगा। तो पहला काम माओ वही काम कर रहा है कि जितना क्रान्तिकारी माइंड है उसको पहले खत्म कर दो। तो मैं मानता हूं कि ये ठीक क्रान्तिकारी लोग नहीं हैं।

मेरा मानना है कि सत्ता भी बहुमत को परसुएट करने के बहुत उपाय कर सकती है। सारी एजूकेशन

सत्ता के हाथ में है। जिन मामलों पर मैजारटी राजी नहीं है, हम अधैर्य की वजह से दिक्कत में पड़ जाते हैं। नहीं तो हम सारी शिक्षा को बदलने की फिक्र करेंगे। बीस साल देर लगेगी, बीस साल बाद जब नयी पीढ़ी आयेगी हम उसे परमुएट करने की पूरी कोशिश करेंगे। रेडियो हाथ में, अखबार हाथ में है, साहित्य हाथ में है, हम सब तरह से परमुएट करेंगे। तलबार ही हाथ में नहीं है और बहुत कुछ हाथ में है। लेकिन जल्दी है, जल्दी तलवार से हो जाती है लेकिन क्रांति भी मर जाती है। हम परमुएट करें, मुल्क को सोचने और चिन्तन का मौका दें। मेरा मानना है कि क्रांतिकारी हुकूमत में आये तो पूरे मुल्क के चित्त को क्रांतिकारी बनाने का प्रयास उसे करना चाहिए बजाय इसके कि क्रांति लाने की जल्दी करें। बजाय इसके कि वह समाज की व्यवस्था बदलने की कोशिश करे उसे फिक्र करनी चाहिए कि समाज का मन बदले। मन बदल जाय तो व्यवस्था नानवायलेंस में बदल जाय, उसमें कोई बहुत झंझट नहीं है। मन तो बदलता नहीं और व्यवस्था तोड़ना शुरू कर देते हैं तो वायलेंस शुरू हो जाती है। अगर समझ ले कि एक क्रांतिकारी हुकूमत में आता है तो उसके सामने दो विकल्प हैं– एक विकल्प तो यह है कि वह ढांचे को तोड़ दे अभी, ढांचा तोड़ेगा तो हिंसा होने वाली है और ढांचा तोड़ने में और हिंसा करने में जो सबसे बड़ा नुकसान होने वाला है वह यह रहेगा कि आदमी क्रांतिकारी न रह जायेगा। बीस साल की हिंसा और ढांचे की तोड़ फोड़ में और नये ढांचे के खिलाफ कठिनाइयां न हो सकें इसकी चेष्टा में वह कंफर्मिस्ट हो जाने वाला है। माइंड कोई ऐसी एन्जायटी नहीं है कि क्रांतिकारी कंफर्मिस्ट न हो सके। माइंड बहुत लिक्वीडिटी है और हम जो करते हैं वह हो जाते हैं। तो माइंड क्या करेगा और मुझे अगर ऐसा लग गया कि माइंड ठीक है तो क्रांति खत्म हो गयी। क्रांतिकारी का हिस्सा है कि वह जानता है कि मैं गलत भी हो सकता हूं इसलिए यह मेरे गलत होने की संभावना जारी है इसलिए तलवार उठाना गलत है क्योंकि यह आदमी को मार डालूं और यह आदमी ठीक आदमी हो सकता है। तो क्रांतिकारी के हाथ में सत्ता आयी तो मेरी दृष्टि में जो काम उसे करने का है वह माइंड बदलने का है, ढांचा बदलने का नहीं क्योंकि माइंड पुराना था तो ढांचा पुराना था, माइंड नया हो सकेगा ढांचा नया हो सकेगा, उसमें अड़चन नहीं है। तो माइंड बदलने की कोशिश करें ढांचे को गिराने की जल्दी न करें या जिस मामले में बहुमत राजी हो ढांचा बदलने में तो ठीक है और जिस मामले में बहुमत राजी न हो उस मामले में माइंड को बदलने की फिक्र करें। लंबी प्रक्रिया होनी है और क्रांति लंबी ही हो सकती है। अबतक हमारा यही ख्याल रहा कि क्रांति दो चार साल में हो जाय तो यह बेवकूफी की बात है। क्रांति जैसी चीज, और कोई मुल्क अगर सौ साल तक क्रांतिकारी होने की हिम्मत न जुटा सकता हो तो उसे क्रांति की झंझट में नहीं पड़ना चाहिए क्योंकि जल्दबाजी में सब दावा कर लेगा। यह जल्दीबाजी का मामला नहीं है क्रांति। उस समय व्यवस्था आयेगी कि हमें शिक्षा बदलनी चाहिए, शिक्षा में नये तत्व ढालने चाहिए, मुल्क में नये ढांचे की हवा पैदा करनी चाहिए। निगेटिव माइंड कैसे पैदा हो इसकी फिक्र करनी चाहिए। फोकेटिव क्वेश्चनिंग शुरू करनी चाहिए मुल्क में और उसमें सत्ताधिकारी को अपने से क्वेश्चन करनी चाहिए तो मुल्क में जो माइंड बदलने से रीमाइंड पैदा होगा वह ढांचा तोड़ देगा और तब कोई वाइलेंस न होगा लेकिन अगर हमने फिक्र की कि अभी ढांचा बदल देना है तो वाइलेंस शुरू होगा क्योंकि हमसे कोई पूरी तरह राजी नहीं है। सच तो बात यह है कि दो आदमी कभी पूरी तरह एक दूसरे से राजी नहीं होते हैं, होना भी नहीं चाहिए, कोई कारण भी नहीं है होने का। हम जब पूरे निकट होते हैं तब भी राजी नहीं होते लेकिन क्रांतिकारी और कंफर्मिस्ट में यही फर्क है कि कंफर्मिस्ट कहेगा राजी हो और नहीं होते हो तो बस खत्म करते हैं। क्रांतिकारी कहेगा कि तुम इस समय राजी नहीं हो तो हम दोनों भिन्न हैं और जहां तक हम राजी हैं यहां तक हम साथ खड़े हैं। जहां हम भिन्न हैं एक दूसरे से समझाने की कोशिश करें। हो सकता है तुम ठीक हो और हो सकता है मैं ठीक हूं, हम करीब आने की

कोशिश करें। तो मेरा मानना है कि अगर मुल्क में चिन्तन का, मनन का, विचार का पुराने ढांचे ने हवा पैदा नहीं होने दी तो यह तो खतरनाक है लेकिन क्रांतिकारी को खतरा नहीं होना चाहिए क्योंकि क्रांतिकारी को खतरे का क्या सवाल है। क्रांतिकारी कह यहा रहा है हम सब खतरे लेने को तैयार हैं लेकिन जो सही है वह आये तो वेल्यु प्रस्तुत होगी। अभी जो भी क्रांतियाँ हुई हैं सब ट्रांसफार्म हैं इसलिए खुद को हम आत्मघाती कर लेते हैं, आत्मघाती इस अर्थ में कि वह जो क्रांतिकारी करता है सत्ता में पहुंचकर वह वही होता है जो उसका दुश्मन कर रहा था और तब वह करने की प्रक्रिया में वहां पहुंच जाता हैजहाँ उसका दुश्मन पहुंच जाता है और जो क्रांतिकारी था उसके साथी वहां पहुंच जाते हैं जहां वह क्रांति पर खड़ा हुआ था।

ट्राटस्की ने लिखा है कि क्रांति हो जाने के बाद रूस यह में अनुभव हुआ कि हमें क्रांतिकारियों से भी लड़ना पड़ेगा। जभी सत्ता आती है हाथ में तो काम ठप हो गया, मामला बदल गया। जो लड़ रहा था, जो विरोधी था। मैं बहुत दिनों तक शिक्षक था तो मेरा अनुभव था कि कक्षा में सबसे ज्यादा रिबीलियस लड़का था उसे केप्टन बना लो, मामला खत्म हो गया। सब रिबीलियस गया और वह कंफर्मिस्ट हो गया ताकि वह दूसरे को ठीक करने में लग जायगा। अब तो उसकी प्रतीक्षा उसमें है कि वह व्यवस्था कैसे बना ले। सारे विचारवान् शिक्षक यह प्रयोग करते हैं कि जो सबसे बदमाश लड़का है उसे केप्टन बना दो मामला खत्म हो जाय, इतना सा पद, मामला खत्म हो गया। यह जो क्रांतिकारी है, यह क्रांतिकारी सचुएशन से और ऐसे बहुत कम लोग हैं जो सिर्फ रिबीलीशनरी हैं क्योंकि रेव्युलोशनरी होना एक बात है। कि मैं मजदूर हूं तो मैं कम्युनिस्ट हूं। कल मैं मालिक हो जाऊं तो केपटलिस्ट हो जाऊं। यह सिच्युएशन की रिव्युलीशन है। रिबीलेशनरी माइंड नहीं था वह, इसे हो गया है। यह मजदूर हमें बरदाश्त नहीं है तो सारे पूंजीपति को मिटा देंगे लेकिन हम, हम मजदूर नहीं रह सकते। ये सभी पूंजीपति हो गये, बात खत्म हो गयी। सिच्युएशन से जो रेबीलीशनरी है वह कंफर्मिस्ट सिद्ध होगा, हुकूमत में पहुंचते ही। यह तो हिंदुस्तान में हुआ कि क्रांति की बात भी होती थी थोड़ी सी ऊपर से—सब सिच्युएशन की बात है। क्रांतिकारी माइंड का मतलब यह है कि मर जाना लेकिन गलत को नहीं लेना है।

प्रश्न : आपने जैसा अभी बताया कि बिना प्रेम के विवाहअच्छा नहीं है, यदि ऐसा होगा तो डाईवोर्स का जो मार्ग है, जो प्रोसीजर है वह बहुत सरल बनाना चाहिए। डाईवोर्स के नियम को यदि सरल बना दिया गया तो समाज में स्थिरता कैसे बनी रहेगी ?

उत्तर : स्थिरता मूल्यवान नही है। स्थिरता की वेल्यू ही मूल्यवान नहीं है और स्थिरता की वेल्यू ही झूठी है। जीवन स्थिर है ही नहीं, जीवन गतिमान है इसलिए तो हमने जगह जगह जिच पैदा कर दी है और मेरा मानना यह है कि स्थिरता का मूल्य भी ओल्ड माइंड का हिस्सा था। हमारा मूल्य जीने का है, और जीने में एक गति है। गति रहते हुए अगर जीवन की व्यवस्था चलती हो तो स्वीकार्य है, गति को रोककर जीवन की व्यवस्था चलती हो तो अस्वीकार्य है। मेरा कहना यह कि डाइवोर्स सच तो यह कि एक पार्टी खबर कर दे रजिस्ट्रार को, दो का क्या सवाल है, पत्नी ने या पति ने खबर कर दी कि हमारा मामला खत्म हो गया है, इसको खत्म कर दिया जाय, बात खत्म हो गयी। दूसरे से पूछने की भी जरूरत नहीं है क्योंकि अलग होने के लिए दूसरे से पूछने का क्या सवाल है। डाइवोर्स इतना सरल होना चाहिए और विवाह की व्यवस्था कठिन होनी चाहिए और डाइवोर्स की सरल। डाइवोर्स की व्यवस्था इतनी नोमिनल कि जिसका कोई सवाल नहीं है। जैसे सुबह मन में हुआ तो हम जाकर खबर कर दें और तार दे दें और मामला खत्म हो जाय। विवाह की व्यवस्था कठिन होनी चाहिए। आज एक आदमी दरखास्त दे तो उसे एक साल का एक्सपेरिमेंटल मैरिज का लाइसेंस मिलना चाहिए

सिर्फ। एक साल साथ रह लें, सोच लें, समझ लें। साल भर बाद वह दोबारा आजायें दोनों और कहते हों कि हम आगे रहने के लिए विचार करते हैं तो शादी होनी चाहिए। शादी में उतनी बाधा डालनी चाहिए जितनी हम डाइवोर्स में डालते हैं क्योंकि हम तीन साल की बाधा डाल देते हैं। यह सब झंझट शादी में डालना चाहिए क्योंकि दो आदमी अगर साथ रहने को राजी हो रहे हैं तो हमें सोसाइटी को पूरी तरह फिक्र कर लेनी चाहिए कि वे साथ रह सकेंगे ? इसकी फिक्र करनी चाहिए। मजा यह है कि वे अलग रहते हैं तो उसकी फिक्र करते हैं लेकिन वह तो बेमानी है। लेकिन एक साल एक्सपेरीमेंटल मैरिज की व्यवस्था करनी चाहिए। वे पति पत्नी नहीं हैं, मित्र की तरह साथ रहेंगे, समझेंगे एक दूसरे को। अब तो कृत्रिम साधनों का इतना उपाय है कि बच्चे पैदा होने का कोई सवाल नहीं है अब बहुत सुविधा है, सवाल है एक्सपेरिमेंटल मेरिज को बनाने की। साल भर के बाद अगर वे आकर कहते हैं, और भ्रम टूटना हो तो साल भर काफी लंबा वक्त है, दो महीने में टूट जाता है। साल भर बाद वे अगर आकर कहते हैं कि हम साथ रहने को स्वीकार करते हैं दोनों पूरी तरह तो सारी इन्कवायरी और क्वेश्चेनिंग होनी चाहिए। उनकी सारी जाँच पड़ताल कर ली जाय, उनके ही कहने को न मान लिया जाय, साइकोलाजिस्ट से भी सलाह ली जाय कि ये ये क्वेश्चन किया और ये ये जवाब दिये। ये साथ रह सकेंगे ? और उनको बता दिया जाय कि साइकोलाजिस्ट कहता है कि तुम दोनों साल से ज्यादा साथ नहीं रह सकोगे तो तुम और सोच लो। तुम साइकोलाजिस्ट से मिल लो, बात कर लो, समझ लो। तुम तो कहते हो साथ रह सकेंगे, तुम्हारा कहना काफी नहीं है, तुम्हारे पूरे माइंड को जो समझ सकता है उससे बात कर लो और साइकोलाजिस्ट से तुम समझकर कहते हो तो ठीक है, तुम शादी कर लो। मैरिज में हमें रुकावट डालनी चाहिए क्योंकि मैरिज खतरनाक है एक क्षण के निर्णय से मैरिज बहुत खतरनाक है, जीवन भर का निर्णय नहीं। डाइवोर्स एकदम सरल होना चाहिए।

मैं कहता हूं अभी नहीं आपका इंट्रेस्ट बिल्कुल, आपकी सोसाइटी का। इंट्रेस्ट हो तो ऐसी बेवकूफियां नहीं चलें। आप कहते हैं, मैं मानता हूं कि इंट्रेस्ट होनी चाहिए क्योंकि अंततः सोसाइटी का हिस्सा होने वाला है, आपका ही नहीं, सिर्फ एक स्त्री और आदमी का ही निर्णय नहीं है बच्चा। बच्चा पूरी सोसाइटी का सवाल है, पूरी सोसाइटी को सोचना चाहिए लेकिन सोसाइटी ने कभी कुछ नहीं सोचा। सिर्फ इतना ही सोच लिया है कि बच्चे का खाना पीना, कपड़े की व्यवस्था पूरी तरह हो तो मामला खत्म हो जाय। ये दो पति पत्नी जिन्दगी भर लड़ते रहें और यह बच्चा उनके बीच बड़ा होता रहे तो झगड़े करने से क्या परिणाम होने वाला है इसके माइंड पर, क्या होने वाला है इसका फल। जिसने प्रेम कभी न जाना हो अपने मां-बाप से उसका फल क्या होने वाला है। यह पूरा सीजोफ्रेनिक हो जाने वाला है इसलिए यह बीमार निकलेगा। उसका मस्तिष्क रुग्ण हो जाने वाला है और यह शादी के पहले पूरी तरह भयभीत हो जाने वाला है और जानता है कि क्या होनेवाला है शादी के बाद। उसका पूरी तरह अनकांसेस में उसकी तैयारी है और यह शादी में खोज लेगा जो उसके मां बाप में देखा था और यह सब रिपीटेड सर्किल शुरू हो जायगी। सोसाइटी अगर सच में बच्चों में उत्सुक है तो बहुत दूसरा ढंग सोचना पड़ेगा। सच तो यह है कि अगर सोसाइटी पूरी तरह उत्सुक है तो आज नहीं कल बच्चा मां बाप की प्रापर्टी नहीं समझी जानी चाहिए। वह सोसाइटी की प्रापर्टी है। आज नहीं कल उनके पालने का जिम्मा सोसाइटी का होना चाहिए, मां बाप का नहीं। उनके पैदा करने का लाइसेंस भी सोसाइटी का होना चाहिए, माँ बाप को इच्छा नहीं। हर मां बाप को बच्चा पैदा करने का हक भी नहीं होना चाहिए क्योंकि बीमार हैं, पागल हैं और बच्चे पैदा किये जायें, निपट गँवारी और बेवकूफी की बात है। वे खुद तो खराब थे ही, खराब सिलसिला जारी कर रहे हैं तो सोसाइटी जब तक तय न करेगी कि कौन औरत बच्चा पैदा करेगी, कौन आदमी के साथ तब तक बच्चा पैदा

नहीं किया जा सकता । और आज यह संभावना हो गयी है कि हम सेक्स को और बच्चे पैदा करने को डिसकनेक्ट कर सकते हैं । यह पहले मुश्किल था अगर मेरी पत्नी हो और मैं इस योग्य नहीं हूं कि उससे बच्चा पैदा हो ठीक, तो मैं किसी का वीर्य उधार मांग सकता हूं, बात खत्म हो गयी । मेरा उसमें सेक्स का जो संबंध हो सकता है उसमें कोई बाधा नहीं है और उचित होगा कि मेरा बच्चा स्वस्थ से स्वस्थ हो और जब मैं उसे अच्छी से अच्छी शिक्षा देता हूं तो उसे अच्छे से अच्छा बेसिक बीज क्यों न दूं । नहीं नहीं, मामला यह है, उसे अच्छे से अच्छा बीज मिले जो सुन्दर से सुन्दर, स्वस्थ से स्वस्थ आदमी का वीर्य उसे मिल जाय यह मैं क्यों न करूं । यह बेवकूफी की बात है कि वह वीर्य मेरा ही हो । इसमें कुछ सेंस नहीं है, यह बिल्कुल नानसेंस है । तो सोसाइटी अगर पूरी तरह फिक्र करे और आज कर सकती है, आज तक कर भी नहीं सकती थी । तो सभी मां-बाप को बच्चे पैदा करने का हक नहीं होना चाहिए, उन पर रोक होनी चाहिए कि कौन बच्चा पैदा करेगा, कौन नहीं । हो सकता है, एक युगल में एक ही बच्चा पैदा करने का हकदार हो सकता है तो उसका हमें बच्चा पैदा करने में उपयोग करना चाहिए और उसकी फिजिकल प्रेजेंस की जरूरत नहीं है इसलिए बात खत्म हो गयी है । पत्नी का उपयोग हो तो उसका करना चाहिए । तो एक कल्चर ब्रीडिंग और साइंटिफिक ब्रीडिंग शुरू हो, वहाँ से सोसाइटी का काम शुरू होता है । फिर ये बच्चे कहाँ पाले जायें, कैसे पाले जायें, कैसे वातावरण में पाले जायें, कैसे साइकिक एटमास्फियर में पाले जायें उसकी भी चिन्ता करनी चाहिए । उनका माँ-बाप से कितना कांटेक्ट हितकर है, और कितना उन्हें दूर रखना है वह भी समझने की जरूरत है । मेरा मानना है, चौबीस घंटे मां-बाप के पास रहना बहुत अहितकर है । थोड़ी देर के लिए, सात दिन, आठ दिन में, पन्द्रह दिन में माँ बाप से मिलना हितकर है । क्योंकि तब उसकी प्रेम मूर्ति ही प्रगट होती है और बच्चे के मन में एक प्रेम की धारणा बनती है और जिन ओब्जेक्टिव से वह प्रेम करना सीखता है उनके संबंध में वह उल्टी धारणा नहीं बनाता है और एक मां के पास बच्चा पलता है, लड़ती भी है, मां गाली भी देती है, उसको प्रेम भी करता है, घृणा भी करता मनोवैज्ञानिक कहते हैं, उसका माइंड पहले से सीजोफ्रेनिक हो रहा है । वह एक ही ऑब्जेक्ट को लव भी कर रहा है और हेट भी कर रहा है । उसका माइंड टूट रहा है और वह जिसको भी कभी प्रेम करेगा उसको पीछे से घृणा भी करता रहेगा और उसके माइंड का हिस्सा हो गया । वह अपनी पत्नी को प्रेम भी करेगा और घृणा भी करेगा । वह कभी सोचेगा कि जान ले लूंगा और कभी सोचेगा कि अरे, इसके बिना तो मैं जी भी नहीं सकता और ये दोनों एक साथ चलेंगे और इसका कुल कारण है बच्चा का माँ के पास निरंतर पलना । और भी मजे की बात है कि एक ही माँ के पास बच्चा बड़ा होता है । उसकी जो फिक्स्ड इमेज स्त्री की बन जाती है उसके भीतर, वह ऐसी ही पत्नी माँगता है अनजाने, अनकांसेस में उसको ऐसी पत्नी मिल सके । और यह तो मिलने वाला नहीं है । यह पत्नी हो नहीं सकती । इसका भी कोई उपाय नहीं है कि मेरी मां मेरी पत्नी हो जाय और यह नहीं हो सकता कि मां जैसा दूसरा व्यक्ति उसको मिल जाय । तो जिन्दगी भर उसका जो इमेज् है माइंड का वह एक है, पत्नी दूसरी है । इन दोनों में कांफ्लिक्ट है और वह हमेशा परेशानी का कारण है । वह लड़की को अपने बाप का इमेज है, वह अपने बाप जैसा पति चाहती है, वह मिलने वाला नहीं है । मनोवैज्ञानिक तो कहते हैं कि मां-बाप से बहुत थोड़ा कांटेक्ट चाहिए, वह सुखद है । थोड़ी देर मिल लिए । मां बाप नर्सरी गये हैं लेकिन बच्चे के पालने की सारी साइंटिफिक व्यवस्था है । जैसे एक जमाना था, जैसे घर में कोई रईस बच्चे को पढ़ाता था ट्यूटर रखकर । वह कुछ रईस लोग पढ़ा सकते थे अपने बच्चे को ट्यूटर रखकर । यह तो असंभव है कि सब घर में ट्यूटर पढ़ाने आयें । तो हमको स्कूल खोलना पड़ा । यह ज्यादा साइंटिफिक हुआ और इसमें एक रईस के बच्चे को जो शिक्षा मिलती थी, एक गरीब बच्चे को भी मिलना संभव हुआ । रईस भी इतनी व्यवस्था नहीं करता था जो आज गरीब के बच्चे के लिए संभव है ।

तो आज नहीं कल, बच्चों को इसी तरह सोसल बनाना चाहिए कि एक एक परिवार में बच्चे को बड़ा नहीं करना चाहिए क्योंकि वहां हम पूरी साइंटिफिक व्यवस्था नहीं कर सकते हैं। साईंटिस्ट है, एक साइकलाजिस्ट है, एनालिस्ट हैं, नर्सिज है, डाक्टर हैं, न्यायाम कराने वाला है, बर्थवाडी को समझने वाला है, पूरी तरह माइंड का समझने वाला है। सारा इन्तजाम हम वहां कर सकते हैं। वहाँ बच्चे बड़े होने चाहिए। सोसाइटी ने अभी तक उत्सुकता ली ही नहीं है और सिर्फ सोसाइटी ने इतना ही काम कर दिया कि बच्चे भीतर पैदा हो गये। वह उसको खिलायेगा, पिलायेगा, बड़ा करेगा। यह जिम्मा उसका है, वह उसको छोड़कर भाग नहीं सकता। यह कोई इन्तजाम नहीं रहा। इसी से यह सोसाइटी पैदा हुई है जो हमारे लिए बिल्कुल अजीब सा संसार पैदा हो गया है।

मेरा मानना है कि एक वैज्ञानिक समाज की व्यवस्था में सोसाइटी को बहुत ख्याल रखना पड़ेगा और जैसे ही बच्चा पलता है दूर माँ-बाप से तो माँ–बाप की कलह का कोई असर नहीं है। डाइवोर्स से कलह का कोई संबंध नहीं है। कलह करें क्यों ? कलह को इंच भर भी जगह देने की क्या जरूरत है। मेरा मानना है कि डाइवोर्स अगर सीधा सामने खड़ा हो तो ९० प्रतिशत मौके आप छोड़ देंगे, कलह एकदम कम हो जायगा क्योंकि बेमानी है। कलह सिर्फ इसलिए है कि दोनों व्यक्ति अलग नहीं होते इसलिए कलह है। आपसे कह दूँ जाइये, बात खत्म हो गयी। इसमें झगड़ा क्या है। मगर जाने को कह नहीं सकता, जा सकते नहीं आप, मैं जा नहीं सकता। बैठना यहीं है, कलह जारी रहेगा। डाइवोर्स इतना सरल होना चाहिए जैसे एक मित्र से मित्रता है और छूट जानी है। इससे ज्यादा उसका कोई अर्थ नहीं है और बच्चे की व्यवस्था धीरे धीरे सोसाइटी के हाथ में चली जानी चाहिए तभी डाइवोर्स इतना सरल हो सकता है।

●●●

पत्र–प्रेरणा

(आचार्य श्री द्वारा सुश्री सोनी बहिन को लिखा गया एक दिशा निर्देशक पत्र)

प्यारी सोनी,

प्रेम।

सावधान और सचेत जीने की कला का नाम ही ध्यान है।

वह सावधानी किसी एक चीज के प्रति नहीं—स्वयं में होनी चाहिए समग्र के प्रति।

किसी वस्तु के प्रति नहीं ! बस, सावधान होना है।

सचेतता-जागरूकता चाहिए—जो भी है उसके प्रति। शून्य हो तो शून्य के प्रति भी।

और प्रेम इसी जागरूकता से जन्मता है।

प्रेम अंधापन नहीं है।

सच तो यह है कि बस प्रेम ही आँख है।

आह ! प्रभु को देख सकने वाली आँख वही है।

और ध्यान में मैं सामने आता हूं तो चुपचाप साक्षी बनी रह।

जो भी हो उसे बस देख।

रजनीश के प्रणाम

२३। १२। १९६८

प्रश्नोत्तर वार्त्ता

हरिजन, भारत और मेरी जीवन दृष्टि

[पिछले अंक में आपको आचार्य श्री का यह जीवन दृष्टिकोण स्पष्ट हुआ कि : आदमी है, हरिजन नहीं। हरिजन मिटाना है, बचाना नहीं। हरिजन को अब हिम्मत जुटानी चाहिए और कहना चाहिए : हम आदमी हैं। आदमी का आदमी होना काफी है।

मनुष्य को और मनुष्य के बीच भेद कराने वाले सारे शास्त्र अपराधी हैं। पीछे का युग जा चुका, उसके साथ सब पीछे का जाना चाहिए, ताकि नए का आगमन हो सके।

और आगे प्रस्तुत है, इस अंक में उपरोक्त विषय पर समापन किश्त।]

संकलन : **श्री रमेश पटेल,**
अहमदाबाद

ये शूद्र पैदा क्यों हो गये ? ये हरिजन पैदा क्यों हो गये ? ....पैदा होने का कारण है। दुनिया में वर्ग सदा से हैं। Classes सदा से हैं। लेकिन वर्ण ? वर्ण हिन्दुस्तान की अपनी ईजाद है। वर्ण दुनिया में किसी भी जगह नहीं है। वर्ग सब जगह हैं। गरीब हैं, अमीर हैं। लेकिन शूद्र और ब्राम्हण, क्षत्रिय और शूद्र, वैश्य- जैसा वर्ग कहीं भी नहीं है। वर्ग का मतलब यह होता है कि कोई आदमी गरीब है वह कल चाहे तो अमीर हो सकता है। कोई रुकावट नहीं है Liquidity है एक तरलता है। अमीर गरीब हो सकता है, गरीब अमीर हो सकता है। हिन्दुस्तान ने एक बहुत चालाकी का काम किया है। उसने गरीबों और अमीरों के बीच जो तरलता Liquidity थी, वह खत्म कर दी। उसने निश्चित वर्ण पैदा कर दिये। वर्ण का अर्थ है — ठोस हो गया वर्ग—Frozen-class. शूद्र को–गरीब को उसने कह दिया, दीन को–हीन को उसने कह दिया–कि बस तू जम गया है, अब तेरे भीतर से बदलाहट नहीं हो सकती। तू ऊपर नहीं उठ सकता। ऊपर को Classes को उससे फायदा हुआ। क्योंकि नीचे की Class का Competition–प्रतियोगिता खत्म हो गई।

हिन्दुस्तान ने एक तरकीब ईजाद की–प्रतियोगिता खत्म करने की। करोड़ों शूद्रों से प्रतियोगिता खत्म हो गई। अब उनके बेटे ब्राम्हणों के बेटों से संघर्ष न कर सकेंगे – ऋषि होने का। अब उनके बेटे वेश्यों के बेटों से धनपति होने का संघर्ष न कर सकेंगे। अब उनके बेटे बहादुरों की तरह न लड़ सकेंगे। क्षत्रियों से संघर्ष न कर सकेंगे। एक बड़े वर्ग को नीचे के वर्ग को विराट वर्ग को हमने बिल्कुल जमा दिया – और द्वार बन्द कर दिये – अब तुम कहीं आ-जा नहीं सकते। ऊपर के वर्गों को लाभ हुआ। फिर क्रमशः हम जमाते गये। शूद्र के बाद वैश्य को हमने जमा दिया। उससे कह दिया धन तेरी दुनिया है। इससे आगे तू नहीं बढ़ सकता। यश और ज्ञान तेरी दुनिया नहीं है। क्षत्रिय को कह दिया यश तेरी दुनिया है। लेकिन ज्ञान तेरी दुनिया नहीं है। और सबके

ऊपर—वे जो ज्ञानवान हैं, वे जो पंडित हैं—वे जो ब्राह्मण हैं वे बैठ गये हैं।

ये वर्ग जमा दिये गये। इनसे प्रतियोगिता खत्म हो गई और समाज जड़ हो गया। हिन्दुस्थान को वर्ण से जितनी मृत्यु मिली—जितनी जड़ता मिली—उतनी किसी और चीज से नहीं मिली। इसका फिर परिणाम अनेक रूपों से घातक हुआ। हिन्दुस्थान पर हमला हुआ—तो शूद्र ने कहा, हमें क्या मतलब है? शूद्र को क्या मतलब है, भंगी भंगी रहेगा—चाहे मुसलमान दिल्ली में बैठे—कि हिन्दू बैठे कि अंग्रेज बैठे। भंगी को क्या फर्क पड़ने वाला है? भंगी भंगी रहेगा। भंगी ने कहा कि हमारा भाग्य तो तय है। तुम कोई भी राजा हो—हमें क्या हानि है? हम तो अपने चलते चले जायेंगे, जो हम करते हैं करते चले जायेंगे।

हिन्दुस्थान की विराट जनता वर्णों के कारण हिन्दुस्थान के जीवन में अरुचि से भर गई है। विराग पूर्ण हो गई है। हिन्दुस्थान कभी गुलाम नहीं होता, अगर हिन्दुस्थान में शूद्र न होते। हिन्दुस्थान कभी गुलाम न होता, अगर हिन्दुस्थान में वर्ण न होते। हिन्दुस्थान की वर्ण व्यवस्था ने हिन्दुस्थान के ऐसे टुकड़े कर दिये कि एक भी आदमी को कोई जरूरत न रही। चिन्तित होने की सिर्फ थोड़े से लोगों को चिन्ता थी—क्षत्रियों को—कि हम अपने राज्य को बचायें। बाकी पूरे देश को कोई प्रयोजन न था। गरीब का क्या प्रयोजन है अमीरों के झगड़े से? कोई प्रयोजन नहीं है। वही तो अभी भी हो गया। अंग्रेज हिन्दुस्थान से गया, गरीबों ने सोचा था हमें कुछ मिल जायगा, फिर उनको पता चला कि कुछ नहीं मिलता। अंग्रेज पूंजीपति बदल जाता है, हिन्दू पूंजीपति उसकी जगह बैठ जाता है। गरीब अपनी जगह है वह वहीं का वहीं है, उसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। अमीरों के झगड़े हैं—ऊपर के झगड़े हैं, नीचे के आदमियों को क्या मतलब है? यह हिन्दुस्थान के हजारों वर्षों से शूद्रों की वर्ण व्यवस्था के न टूटने ने ऐसी स्थिति जमा दी है कि हिन्दुस्थान में कोई सामाजिक धारणा, कोई राष्ट्र, कोई Nation, कोई भी पैदा नहीं हो सका।

लेकिन जो लोग इनके विरोध में खड़े हैं वे भी मौलिक आधारों के विरोध में नहीं हैं। गांधी जी चाहते थे कि अछूत मिट जायें, लेकिन गांधी जी कर्म के सिद्धांत के विरोध में एक शब्द भी नहीं बोले। और शायद आपको ख्याल में भी न हो—कि हिन्दुओं ने जो व्यवस्था की है - हिन्दुओं का दिमाग इतना Systematic रहा है—उन्होंने इतनी व्यवस्था की है सिद्धांतों की—सिद्धांतों के मुकाबले, सिद्धांत बनाने के लिये हमसे बढ़िया लोग दुनिया में खोजना मुश्किल है। हम ऐसे गजब के सिद्धांत बनाते हैं कि जिनका कोई हिसाब नहीं। शूद्र हमने ऐसे ही खड़े नहीं कर दिये—हमने पूरी मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक ढांचे की भांति पृष्ट भूमि बनाई। हमारा कहना यह है कि जो आदमी जैसे कर्म करता है वैसा उसे जन्म मिलता है। शूद्र वे हैं—जिन्होंने पाप किये हैं। वे शूद्र वर्ग में पैदा होते हैं। ब्राह्मण वे हैं—जिन्होंने पुण्य किये हैं, वे ब्राह्मण वर्ग में पैदा होते हैं। पिछले जन्मों में जिन्होंने जैसे कर्म किये हैं—उनके चार विभाजन और उन चार विभाजन में लोग पैदा होते हैं। और इसलिये शूद्र भी बिचारा राजी हो गया—उसने कोई बगावत नहीं की। उसने कहा ठीक है—उसने पिछले जन्म में बुरे कर्म किये होंगे—इसलिये हम शूद्र हो गये हैं। और अच्छे कर्म करेंगे तो अगले जन्म में ब्राह्मण हो जायेंगे। अगले जन्म की आशा में वह आज शूद्र होने को राजी हो गया। हिन्दुस्थान का शूद्र राजी है—वह अगले जन्म की प्रतीक्षा कर रहा है। और हिन्दुस्थान का दिमाग बेईमान है। जिसको भी राजी करवाना हो—उसे अगले जन्म का प्रलोभन दे दो—वह राजी हो जायेगा।

जब तक यह कर्म की विचार सारणि न टूटे—और जब तक हम इसकी पुनर्व्याख्या न करें—तब तक शूद्र का मुक्त होना बहुत मुश्किल है। और बड़े मजे की बात तो ये है कि जिसको इससे मुक्त होना है वह उसी से बंधने की पूरा कोशिश कर रहा है। विनोबा जी और गांधी जी उसको उन्हीं मंदिरों में ले जाने के लिये प्रवेश दिलवा रहे हैं—जिन मंदिरों से उन्हें मुक्त होना है। ये बड़े मजे की बात है। जिन हिन्दू पुरोहितों से मुक्त होना

है--गांधी जी और विनोबा जी कह रहे हैं कि उन मंदिरों में शूद्र का प्रवेश होना चाहिये–ये बड़ी क्रांति की बात है, कि मंदिर में शूद्र का प्रवेश हो। किसके मंदिर में ? उसी के मंदिर में जिसने उसे शूद्र बनाया, उन्हीं पुरोहितों के मंदिर में जिन्होंने उसे हजारों वर्ष तक पीड़ित किया और शोषित किया। मैं तो कहूंगा कि एक शूद्र को भी किसी मंदिर में नहीं जाना चाहिये। अगर सारे ब्राह्मण पैर पड़ें तो भी नहीं जाना चाहिये, क्योंकि उस मंदिर में क्यों जाना चाहिये जिसने तुम्हें तोड़ा और नष्ट किया और बरबाद किया और शोषण किया। लेकिन गांधी जी और उनके सब साथी कहते हैं कि मंदिर का द्वार खोलो हम शूद्र को मंदिर में ले जायेंगे। बड़ी क्रांति हो रही है, शूद्र को मंदिर में ले जाने को यह ब्राह्मण का ढीला पंजा जो हो रहा है--उसको फिर कसे जाने की तरकीब है। फिर ब्राह्मण के हाथ में पहुंच जायगा ये शूद्र उसके मंदिर में पहुंचते ही। आज वर्ण टूटने के करीब आ रहे हैं, व्यवस्था टूटने के करीब आ गई हैं, उसको फिर नई शक्ल देकर फिर उसको उसी व्यवस्था के भीतर रखने की कोशिश चल रही है। डर है कि कहीं शूद्र हिन्दुओं के बाहर न चला जाय। लेकिन शूद्र को हिन्दू के भीतर रहने की जरूरत क्या है ? सच तो यह है कि किसी को भी हिन्दू होने की जरूरत क्या है ? किसी को मुसलमान होने की जरूरत क्या है ? **आदमी होना पर्याप्त है।** और जिसको आदमी होना पर्याप्त नहीं मालूम होता वह हिन्दू या मुसलमान होने से कुछ और विकसित नहीं हो जावेगा। आदमी होना काफी है।

हिन्दुस्थान में एक क्रांति की जरूरत है कि शूद्र तो अब कह ही दें कि अब हम हिन्दू नहीं हैं–और भारत के ये लोग जो शूद्र नहीं हैं--और बुद्धिमान हैं–ये भी कह दें कि हम हिन्दू नहीं हैं, और बहुत से वे लोग जो बुद्धिमान हैं कह दें कि हम मुसलमान नहीं हैं, बहुत से वे लोग जो बुद्धिमान हैं कह दें कि हम जैन और ईसाई नहीं हैं। हम आदमी हैं। और अगर हमें खोज करनी है सत्य की--और अगर हमें प्रभु को खोजना है, तो हम खोजेंगे। लेकिन हिन्दू के मंदिर में नहीं--मुसलमान के के मंदिर में नहीं कितनी बड़ी दुनिया उसका मंदिर है— हम वहीं खोजेंगे। हम क्यों किसी मंदिर की बंद दीवारों के भीतर जायें ? कितना विराट मंदिर है उसका — हम उसका दर्शन यहां करेंगे। लेकिन इसकी हिम्मत शूद्र भी नहीं जुटा पाते। वे भी कहते हैं कि हम हरिजनों को अधिकार दो। हम हरिजनों को जगह दो। मंदिर का द्वार खोलो–हम भीतर प्रवेश करेंगे।

तुम किससे अधिकार मांगते हो ? और ध्यान रहे—अधिकार मांगने वाले कभी भी स्वतंत्र नहीं हो सकते। अधिकार मांगने वाले कैसे स्वतंत्र हो सकते हैं? जिनसे अधिकार मिलेंगे, वे उनसे परतंत्र बने ही रहेंगे। और जिन्होंने दिमागी सांचे बनाकर हजारों वर्ष तक आदमी को कसा है वे इतने होशियार हैं कि नये सांचे बना लेंगे, और फिर कस लेंगे। नहीं। **सब जाल तोड़कर बाहर आने की जरूरत है। किसी हिन्दू मंदिर में किसी शूद्र को जाने की जरूरत नहीं है, और किसी शूद्र को अपने को हरिजन कहने की जरूरत नहीं, आदमी कहना काफी है।**

तो मुझसे मत पूछें कि मैं हरिजन के घर मैं क्यों नहीं ठहरता। मैं घरों में ठहरता हूं। हरिजन और गैर–हरिजन से मुझे कोई मतलब नहीं है। आप आयें और कहें मुझसे कि चलें मेरे घर मैं ठहर जाऊंगा। लेकिन जरा भी आपको भ्रम हो और आप प्रचार करें कि हरिजन के घर में मैं ठहरा हूं–तो ऐसे पागलपन में मैं नहीं जाने को राजी होऊंगा। ये पागलघर है, आदमी का घर होता है। मैं मेहमान बन सकता हूं आदमी का हरिजन वगैरह से मुझे कोई मतलब नहीं है। हजार कारण हो सकते हैं—लेकिन एक ही कारण काफी है।

●●●

निर्विचार चेतना की ओर

पूछा है कि विचार छोड़ दें ? विचार छूटेंगे कैसे ? सुबह आपने कहा कि विचार छोड़ दो—और निर्विचार हो जाओ । लेकिन विचार कैसे छोड़ दें ?

इसे थोड़ा समझ लेना उपयोगी है। मैं यह मुट्ठी बाँधे हुए हूं और आपसे आकर पूछूँ कि ये मुट्ठी मुझे खोलनी है—कैसे खोलूँ ? तो आप क्या कहेंगे ? आप कहेंगे बाँधो मत, मुट्ठी खुल जायगी। बांधो मत। खोलने के लिये कुछ भी नहीं करना है । बाँधने के लिए कुछ करना पड़ता है। मुट्ठी बाँधने के लिए मुझे श्रम करना पड़ रहा है, अगर मैं न बांधू तो मुट्ठी खुल जायगी। खुला होना मुट्ठी का स्वभाव है। इसमें दो बातें समझ लेना जरूरी हैं। एक:—विचार हम कर रहे हैं—पकड़े हुए हैं इसलिए चल रहा है। ये मत पूछें कि विचार को हम कैसे छोड़ें ? ये पूछें कि विचार को हम कैसे पकड़े हुए हैं ? और पकड़ने की तरकीब है तदात्मय (Identity)। हम प्रत्येक विचार के साथ अपना तदात्मय कर लेते हैं। क्रोध आया—और आप कहते हैं—मुझे क्रोध आया। आप फासला नहीं कर पाते कि मैं अलग हूं और क्रोध अलग हैं। एक विचार भीतर चल रहा है, और आप उस विचार के साथ एक हो जाते हैं—और लगता है---यही मैं हूं। कभी आपने ख्याल किया है कि आप सदा पृथक हैं। आकाश में एक नीला बादल उड़ा जा रहा है। आप देख रहे हैं। आप यह कहते हैं कि मैं नीला बादल हूं ? कहते हैं—वो नीला बादल रहा---देखनेवाला मैं हूं। मन के आकाश पर एक विचार चल रहा है। आप फौरन कहते हैं कि कि यह मैं हूं। झंझट में पड़ गये । मन के आकाश पर विचार उतनी ही दूरी पर चल रहा है आपसे जितना उस आकाश पर एक बदली का टुकड़ा चल रहा है। आप फिर भी अलग हैं। आप दूर खड़े साक्षी से ज्यादा नहीं हैं। यह हमें स्मरण रखना होगा कि निरंतर किस विचार से मैं पृथक हूं। अलग हूं। और कोई विचार से मैं जुड़ा नहीं हूं। लेकिन हम विचार से अपने को जोड़ने के इतने आदी हो गये हैं—कि हमें ख्याल ही नहीं आता। जब क्रोध आता है—बजाय इसके कि आप कहें कि मेरे सामने क्रोध आ गया है---आप कहते हैं कि मैं क्रोधी हो गया हूं। आप गलत कहते हैं। जब आपके सामने सुख आ जाय—तो बजाय यह कहने के कि मेरे सामने सुख आ गया है-आप कहते हैं कि मैं सुखी हो गया हूं। अगर आप सुखी हो गये हैं तो आप कभी दुखी न हो सकेंगे ? लेकिन हम जानते हैं कि सुख चला जायेगा और दुख आ जायगा। एक कमरे में मैं बैठ जाऊं सूरज निकले किरणें भर जायें। तो मैं यह नहीं कहता कि मैं प्रकाश हो गया हूं। मैं कहता हूं—कमरे में प्रकाश भर गया---मैं प्रकाश को देख रहा हूं। फिर साँझ आती है अंधेरा भर जाता है मैं कहता हूं कि मैं अंधेरा हो गया हूं ? मैं कहता हूं कि अब अंधेरा भर गया है। अब मैं अंधेरे को देख रहा हूं प्रकाश अंधेरा कमरे में आता जाता है मैं दृष्टा हूं। मैं देखता हूं। मन मे विचार आते जाते हैं-सुख दुख आते जाते हैं—क्रोध-प्रेम घृणा आते जाते हैं—भाव आते हैं—और जो बैठा हुआ है भीतर वह हरएक के साथ कहने लगता है-यह मैं हो हो गया हूं। तब पकड़ शुरु हो गई। तब Clining शुरु हो जाती है। फिर मुक्त होना बहुत मुश्किल हो जाता है । इसीलिए मैंने कहा ध्यान का अर्थ है साक्षी—भाव। मैं देखूँ जो आ रहा है।

एक सम्राट ने अपने वजीरों से कहा:—मैं तुमसे ऐसा सूत्र चाहता हूं—जो मुझे हर स्थिति में काम दे सके। दुख आये तो काम दे, सुख आये तो काम दे। मुझे एक सूत्र ताबीज पर लिख दो—जो हर स्थिति में काम आये। वजीर बड़ी मुश्किल में पड़ गये । क्या लिखें ? ऐसा कौन सा सूत्र हो जो हर जगह काम दे। फिर उन्होंने एक फकीर से पूछा। फकीर ने एक ताबीज

दे दिया—और उसमें एक कागज की पुड़िया लिखकर रख दी। और कहा जब सुख-दुख आये तब पढ़ लेना। राजा पर जब सुख आया। उसने ताबीज खोला। दुख आया। उसने ताबीज खोला। उसमें एक छोटा सा वाक्य लिखा था—लिखा था—This too will pass यह भी चला जायगा। इतना ही लिखा था—उस कागज पर—This too will pass. सुख आया—राजा ने पढ़ा। यह भी चला जायेगा—और राजा पृथक हो गया। क्योंकि जो चला जायेगा वह मैं नहीं हो सकता हूं। मैं तो बच रहूंगा। फिर दुख आया और राजा ने कहा—यह चला जायेगा। यह तो मैं नहीं हूं। मुझ पर चोजें आती हैं और जाती हैं, मैं तो अलग हूं। इस प्रथकता को खोजना ही साक्षीभाव है। तो यह मत पूछें कि विचार को कैसे रोकें? रोकने की कोई जरूरत नहीं है। विचार को आने दें जाने दें, आप प्रथक हो जायें। आप भिन्न हो जायें। आप जान जायें कि मैं अलग हूं तो विचार धीरे-धीरे अपने आप विसर्जित हो जाते हैं। उन पर पकड़ छूट जाती है। फिर वह ही रह जाता है जो अकेला है। उस अकेले में जो अनुभव होते हैं वे निर्विचार के, ध्यान के अनुभव हैं। लेकिन हम क्या करते हैं? हम विचार से लड़ते हैं। लड़कर तो आप कभी विचार को अलग नहीं कर सकते। ध्यान रहे लड़ना तो बुलाने का उपाय है। अगर किसी विचार से आप लड़े और आपने कहा कि इसे अलग करके रहूंगा, बस, फिर आप मुश्किल में पड़ गये। फिर उस विचार से आप कभी मुक्त न हो सकेंगे। आप जितना लड़ेंगे उतना ही वह आयेगा। जितना आप लड़ेंगे उतना ही आप मान रहे हैं कि मैं उससे एक हूं। नहीं तो लड़ेंगे क्यों? लड़ने की क्या जरूरत है? वह अलग है, मैं अलग हूं। वह आया है चला जायेगा। मुझे क्या प्रयोजन? लेकिन हम लड़ते हैं।

मैंने सुना है तिब्बत में एक फकीर था। उसके पास एक आदमी आया और उसने कहा, मुझे एक मंत्र दे दें मैं कोई सिद्धि करना चाहता हूं। फकीर ने कहा मेरे पास कोई मंत्र नहीं है, लेकिन नहीं माना वह व्यक्ति। पैर पकड़ लिये हाथ जोड़ने लगा। दे ही दो। फकीर ने एक कागज पर एक मंत्र दे दिया और कहा इसे पांच बार पढ़ लेना। फिर तो वह आदमी भागा। उसने लौटकर धन्यवाद भी न दिया। वह मंदिर की सीढ़ियां उतारता था तब वह फकीर चिल्लाया, कि ठहरो, मैं एक बात बताना भूल गया, एक शर्त बताना भूल गया। ध्यान रहे, बंदर का स्मरण न आये, जब ये मंत्र तुम पढ़ो। अगर बंदर का स्मरण आया मंत्र बेकार हो जायेगा। बंदर दुश्मन है इस मंत्र का। उस आदमी ने कहा, मुझे कभी बंदर का स्मरण जिंदगी हो गई नहीं आया। इसकी फिकर मत करो। लेकिन भूल हो गई। पूरी सीढ़ी उतरना मुश्किल हो गया, बंदर का स्मरण शुरू हो गया। रास्ते पर, घर की तरफ चला और चारों ओर बंदर मन में घूमने लगा। बहुत आंख बंद करता है बंदर को भगाने को, लेकिन बंदर जोर से आते हैं। रात हो गई, मंत्र लेकर बैठता है, हाथ में मंत्र है, लेकिन भीतर बंदर है वह घबड़ा गया, उसने कहा इन बंदरों से कोई संबंध कभी नहीं रहा, आज क्या हो गया? क्या ये बंदर पाँच मिनट के लिये न रुकेंगे? रात भर मुश्किल हो गई लेकिन, पाँच मिनिट के लिये बंदर से छुटकारा नहीं। सुबह तो पागल हो गया। जाके मंत्र लौटा दिया उस फकीर को। कहा क्षमा करो। अगले जन्म में हो सकती है अब ये स्थिति। फकीर ने कहा क्यों क्या बात है? उसने कहा ये बंदर जान लिये ले रहे हैं। और उससे छुटकारा अब इस जन्म में नहीं हो सकता है। और तुम्हें अगर मालूम था कि बंदर से बाधा है तो एक दिन रुक जाते, बाद में बता देते। तो यह सिद्ध हो जाता मंत्र, अब वह नहीं हो सकेगा। उस फकीर ने कहा, मैं क्या कर सकता हूं, यही शर्त है। यह शर्त पूरी करनी जरूरी है।

क्या हो गया इस आदमी को? बंदर से छुटकारा नहीं होता, जिस विचार से हम लड़ते हैं उस विचार पर हम केन्द्रित हो जाते हैं। जिस विचार से हम लड़ते हैं उस विचार से हम Hypnotized हो जाते हैं। जिस विचार से हम हटना चाहते हैं सारा चित्त उसी पर

केन्द्रित हो जाता है। किसी को भुलाने की कोशिश करो फिर मुश्किल हो जायेगी। वह नहीं भूलेगा। प्रेमियों से पूछो, प्रेमिकाओं को भूलना मुश्किल हो जाता है। जिनको नहीं भुलाना है वे भूल जाते हैं। जिनको भुलाना है वे कभी नहीं भूलते। चित्त की आदत है, जिससे लड़ोगे, चित्त वहीं केन्द्रित हो जायेगा।

एक नया नया आदमी सायकिल सीखता है। रास्ते पर एक पत्थर पड़ा है। इतना बड़ा रास्ता है साठ फीट चौड़ा। लेकिन वह पत्थर उसे दिख रहा है। फिर वह डरता है कि कहीं पत्थर से टकरा न जाउं। अब अगर कोई निशाने बाज भी साठ फीट चौड़े रास्ते पर टकराना चाहे तो चूकने की सम्भावना ज्यादा है, लेकिन ये सज्जन टकरायेंगे। ये नहीं बच सकते, साठ फीट रास्ता अब इनको दिखलाई नहीं पड़ेगा, अब इनको वह पत्थर ही दिखलाई पड़ेगा। अब इनका चाक घूमा, और इनके प्राण घबड़ाये और ये Hypnotized हुए उस पत्थर से। अब इनकी साइकिल चली उस पत्थर की तरफ, ये उससे टकरायेंगे। आदमी जिससे बचना चाहता है उसी से घिर जाता है। पूछो ब्रम्हचारियों से, सिवाय स्त्री के किसी का दर्शन नहीं होता।। हो ही नहीं सकता। अगर भगवान भी प्रगट होंगे तो स्त्री की ही शक्ल में होंगे, और किसी शक्ल में वे प्रगट नहीं हो सकते। ब्रम्हचारी का कष्ट है बेचारे का वह सेक्स से लड़ रहा है, और सेक्स से घिर गया। इसलिये ऋषि मुनि स्त्री के लिये इतनी नाराजगी जाहिर करते हैं। ये नाराजगी किसके लिये है? वे जो स्त्रियाँ उनको घेर लेती हैं उनके लिये? असली स्त्री से नहीं है। असली स्त्रियों से क्या मतलब है? ऋषि मुनि कहते हैं स्त्री नरक का द्वार है, स्त्री से बचो। ये किससे बचने के लिये कह रहे हैं। वह जो भीतर स्त्री है उनको घेरती है। और घेरती क्यों है? स्त्री से भागते हैं इसलिये, स्त्री घेरती है। जिससे भागोगे वह घेर लेगा। जिससे बचोगे वह पकड़ लेगा, जिसको हटाओगे वह आ जायेगा? जिसको कहोगे मत आओ वह समझ जायगा कि डर गये हो–आना जरूरी है। वह आ जायगा।

चित्त से लड़ना, चित्त के विचारों से लड़ना आत्म घातक है। फिर वही उलझन हो जायेगा। इससे बचना जरूरी है। बचेंगे कैसे? बचने के लिये आवश्यक है कि विचार से लड़ो ही मत। सेक्स से मुक्त होना है तो सेक्स से लड़ो मत। साक्षी बनो। क्रोध से मुक्त होना हो तो क्रोध से लड़ो मत, साक्षी हो जाओ। जिससे मुक्त होना हो उससे लड़ो मत उसे देखो और जानो कि मैं पृथक हूं–वह पृथक है, दूरी है, फासला है। दोनों के बीच अनंत फासला है। मैं अलग हूं वह अलग है। और सचाई यही है। और जितनी यह साक्षता गहरी होगी–कि मैं अलग हूं उतनी हँसी आयगी कि मैं किससे लड़ूं? जो--जिससे कोई झगड़ा ही नहीं, जिससे कोई सम्बन्ध ही नहीं–उससे लड़ने की जरूरत ही क्या है? और तब, उससे झगड़ा बन्द हो जाता है। जैसे मैंने कहा लड़ने से आती है कोई चीज, न लड़ने से जाने लगती है।

ब्रह्मचर्य सेक्स से लड़ने से नहीं आता है, सेक्स के प्रति जागने से सेक्स चला जाता है। जो शेष रह जाता है उसका नाम ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य सेक्स से उलटा नहीं है। ब्रह्मचर्य सेक्स के विदा हो जाने का अभाव है--वह जो शेष रह जाता है सेक्स के विदा हो जाने पर। लेकिन सेक्स से लड़कर कोई ब्रह्मचारी नहीं हो सकता। मुझे साधु-सन्यासी मिलते हैं, जब वे सबके सामने होते हैं, आत्मा परमात्मा की बात करते हैं। फिर वे कहते हैं अकेले में मिलना है और जब अकेले में मिलते हैं, तो सिवा सेक्स के दूसरी बात ही नहीं करते। असली सवाल तो वही है–सबके सामने पूछ भी नहीं सकते, क्योंकि सबको तो वे सुबह से शाम तक ये ही बातें सिखा रहे हैं जो उनको ही नहीं हो सकीं हैं, और होंगी भी नहीं। क्योंकि विधि ही गलत है method ही गलत है--अज्ञान पूर्ण है--अमनोवैज्ञानिक है--खतरनाक है। असंगत है उसकी कोई संगति नहीं है–जीवन के परिवर्तन से और रूपान्तर से–लड़ने की संगति है? झगड़ने की संगति है?

इसलिये मैं कहता हूं--चित्त के किसी भी विकार से–चित्त की किसी भी विकृति से कभी मत लड़ना, लड़े

कि हारे, हारना हो तो लड़ना। जो लड़ेगा वह हारेगा। उसकी हार सुनिश्चित है और अपने चित्त से लड़के कोई कभी जीत नहीं सकता। हाँ, अगर जीतना हो–तो लड़ना मत। देखना, जानना, साक्षी बनना। और जैसे ही साक्षी बनोगे–पाओगे मैं बाहर हूं, मैं भी beyond हूं, मैं तो जो दिखाई पड़ रहा है उससे अलग हूं, और दूर हूं। वह जो चारों तरफ घिरा है धुआँ, वह अलग है-मैं अलग हूं। सूरज के चारों ओर अंधेरा घिर जाये तो भी सूरज अंधेरा नहीं है। लेकिन अगर सूरज अंधेरे से लड़ने लगे–और अंधेरे पर ही ध्यान केन्द्रित करने लगे–और कहने लगे कि मर गया यह अंधेरा मुझे घेर रहा है–अंधेरा हुआ जा रहा हूं मैं–तो सूरज मुश्किल में पड़ जायगा।

लेकिन सूरज जाने कि ठीक है अंधेरा हुआ है–मैं तो सूरज हूं–मैं तो अलग हूं। घिरने दो अंधेरे को। कितना ही अंधेरा निकट आ जाय–फिर भी मैं सूरज हूं। कितना ही अंधेरा पास आ जाय–फिर भी मैं अलग हूं। फिर भी प्रकाश और अंधेरे के बीच फासला अनंत है।

यह प्रत्येक के भीतर जो साक्षी है, जो चेतना है, जो Consciousness है–उसे सजग करने से–जागने से साक्षी बनने से विकार विसर्जित होते हैं, वृत्तियाँ विसर्जित होती हैं–मन विसर्जित होता है और धीरे धीरे वह जगह आती है जहाँ चित्त का आकाश खाली हो जाता है। और सिर्फ चेतना रह जाती है। वह साक्षी भाव के लिये मैंने कहा। यह मत पूछें कि कैसे लड़ें ? यह मत पूछें कि कैसे विचारों को निकालें ? यह मत पूछें कि कैसे विचारों को बंद करें ? यह पूछें ही मत। यह पूछना ही गलत है। यह पूछें कि कैसे जागें–कैसे देखें कैसे पहिचानें–कैसे साक्षी बनें ? ●●

एक सुलझी जीवन दृष्टि

पानी जैसे निर्मल, पर्वत जैसे कठोर

—पूछा है कि आप पहिले तो बहुत सौम्य मृदु-भाषा में बोलते थे, अब आप बहुत agressive बहुत आक्रमक क्यों हो गये हैं ?

●●● वह मेरी गलती थी। गलती इसलिये थी कि यह समाज सौम्य और मृदु भाषा पसंद करता है–क्योंकि सौम्य और मृदु भाषा किसी को चोट नहीं पहुंचाती कोई परिवर्तन नहीं लाती। सौम्य और मृदु भाषा सुखद है–मनोरंजक है–लेकिन जीवन को कहीं बदलती नहीं। अब तो दुनिया में ऐसे लोग चाहिये जो भीतर चाहे कितने ही सौम्य और मृदु हों पर बाहर आक्रमक हो सकें–बाहर agressive हो सकें, तो यह जिन्दगी की कुरुपता को बदला जा सकता है, अन्यथा नहीं बदला जा सकता है। दुनिया में बहुत अच्छे आदमी हुए, और कठिनाई यही रही कि अच्छा आदमी सौम्य और मृदु था–इसलिये दुनिया बुरी है। अच्छा आदमी सौम्य और मृदु रहेगा–दुनिया बुरी रहेगी। अच्छे आदमी को भी हिम्मत जुटानी पड़ेगी।

जीसस चर्च में गये। जीसस के मित्र जानते थे कि ये बहुत सौम्य और मृदु हैं। लेकिन वहां उन्होंने देखा कि चर्च के बाहर ब्याज-खोर बैठे हुए हैं, और जन्मों से चल रहा है ब्याज लोगों का और नहीं चुकता। जीवन बीत गये हैं बूढ़ों के–और जितना कर्ज उन्होंने लिया था उससे कई गुना वे चुका चुके–और वह नहीं चुकता। और मंदिर के सामने ही ब्याज–खोर बैठे हैं। और वे सब ब्याज-खोर पुरोहितों के एजेंट हैं। जीसस ने कोड़ा उठा लिया। उठाके कोड़ा उन्होंने दूकानें पलट दीं। कोड़े मारने शुरू कर दिये। जीसस के मित्रों ने कहा–क्या करते हैं आप ? आप–जो कहते हैं कि जो एक गाल पर चांटा मारे–उसके सामने दूसरा गाल कर दो।

क्रमशः

आचार्य श्री रजनीश जी के आगामी देश व्यापी कार्यक्रम

दिनांक	स्थान	कार्यक्रम	संयोजक
४, ५, ६ जनवरी ७०	अकोला	सत्संग	श्री ओंकार प्रसाद मिश्रा, बाबूजी देशमुख वाचनालय, अकोला (महा०)
१५ एवं २० जनवरी ७०	बंबई	——	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं० ५३, डा० डी० एन० रोड एम्पायर बिल्डिंग, बबई : १ फोन : २६४५३०
१, १७, १८ एवं १९ जनवरी ७०	भावनगर	सत्संग	श्री वीरभद्र सिंह, महाराजा, भावनगर (सौ०)
२८ जनवरी एवं १ फरवरी ७०	दिल्ली	——	श्री लाला सुन्दरलाल जी, जीवन जागृति केन्द्र, ४१, यू० ए० बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली : ६ फोन : २२७६५५.
२९, ३० एवं ३१ जनवरी	अमृतसर	सत्संग	श्री चमनलाल अग्रवाल, जीवन जागृति केन्द्र, २५, केनेडी एवेन्यू, अमृतसर

नई ज्योतियां ! दिव्य वाणी ! जीवन संगीत से आलोकित

नई साज–सज्जा में

आचार्य श्री रजनीश के विचारों की आध्यात्मिक त्रैमासिक संकलन पत्रिका

ज्योति–शिखा

संपादक—श्री महीपाल

मूल्य एक प्रति : १—२५ न० पै० वार्षिक : ५ रु०

(आप भी अपना वार्षिक शुल्क भेजकर इन अनूठी कृतियों को प्राप्त कीजिये या आप चाहें तो उपहार में भेंट करें)

संपर्क : जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,

डा० डी० एन० रोड, बंबई : १

pnone : 264530

गांधीवाद पर आचार्य श्री की सृजनात्मक अभिव्यक्ति :

अस्वीकृति में उठा हाथ

भारत, गांधी और मेरी चिंता

मूल्य : ५) रु०

प्राप्ति स्थल : जीवन जागृति केन्द्र,
रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग
डा० डी० एन० रोड, बंबई–१

जीवन की गहराई में खड़े होकर झाँकिये :

आचार्य श्री की मानवीय चेतना लोक की अतुल गहराई वाली
नवीन कृति :

सत्य की खोज

मूल्य : ३) रु०

प्राप्ति स्थल :

(१) जीवन जागृति केंद्र, बंबई,

(२) सुषमा साहित्य मंदिर, जवाहरगंज, जबलपुर :
फोन : १३३०.

वर्षों से हम

अपनी श्रेष्ठतम सेवायें

प्रस्तुत कर रहे हैं

धुम्रपान के अनोखे आनंद के लिये

नंबर

22

छाप बिड़ी

पीजीये.

निर्माता वृजलाल मणीलाल एन्ड कं. गोंदिया.

अग्रवाल टाइप वर्क्स

(हितकारिणी स्कूल के पास)

दीक्षितपुरा, जबलपुर–२

हमारी विशेषतायें

× हर प्रकार की मुद्रण सामग्री रेडी स्टाक में उपलब्ध

×× 'को-इन्क' के स्टाकिस्ट

××× प्रिंटेक्स मशीन 'अहमदाबाद' के आर्डर सप्लायर्स

पुरानी मशीनरी, प्रेस टाइप की बिक्री एवं खरीदी हेतु
हमसे सम्पर्क स्थापित करें।

अजंता आर्ट एण्ड ब्लाक वर्क्स

३६८, मढ़ाताल, जबलपुर

दीपक लाज के सामने

ब्लाक, डिजाइन, रबर स्टेम्प,
सिने स्लाइड हेतु हमें सेवा का अवसर प्रदान करें

उचित दर व सन्तोषप्रद कार्य ही हमारी विशेषता है।

उत्तम तम्बाकू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और पहलवान छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

— ० —

मोहनलाल हरगोविंददास

(जबलपुर म० प्र०)

जनसेवी संपादक : अजित कुमार । सह-संपादक : आलोक कुमार पांडे ।
स्वत्वाधिकारी प्रकाशक एवं मुद्रक : युक्तांद प्रकाशन समिति, कमला नेहरू नगर, जबलपुर ।
मुद्रण स्थल : जबलपुर को-आपरेटिव प्रिंटिंग प्रेस, गोलबाजार, जबलपुर ।
अक्षर रेखा अनुकृति : श्री कमलेश शर्मा । कवर ले-आउट : श्री शशिन्
वर्ष : १ अंक १३ १ जनवरी १९७० मूल्य : एक प्रति ०.६० वार्षिक : १२/००

स्वयं पर श्रद्धा
धर्म है,
दूसरों पर श्रद्धा
नहीं

Telegram : SHREYAS

Phones : दुकान : ६३५
दुकान : २३५
निवास : १६१

मेसर्स श्रेणीक कुमार चंद्रकांत

अनाज, गुड़, चावल, दाल आदि के कमीशन एजेन्ट

सुरेन्द्रनगर (गुजरात–W. Rly.)